ORGANIC FARMING
(IMPORTANCE AND METHOD)

जैविक खेती
(महत्व एवं विधि)

जैविक खेती क्या है

जैविक खेती एक ऐसी पद्धति है, जिसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशियों के स्थान पर जीवांश खाद पोषक तत्वों (गोबर की खाद कम्पोस्ट, हरी खाद, जीवणु कल्चर, जैविक खाद आदि) जैव नाशियों (बायो–पैस्टीसाईड) व बायो एजैन्ट जैसे क्राईसोपा आदि का उपयोग किया जाता है, जिससे न केवल भूमि की उर्वरा शक्ति लम्बे समय तक बनी रहती है, बल्कि पर्यावरण भी प्रदूषित नहीं होता तथा कृषि लागत घटने व उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ने से कृषक को अधिक लाभ भी मिलता है।

जैविक खेती वह सदाबहार कृषि पद्धति है, जो पर्यावरण जल व वायु की शुद्धता, भूमि का प्राकृतिक स्वरूप बनाने वाली, जल धारण क्षमता बढ़ाने वाली, धैर्यशील कृत संकल्पित होते हुए रसायनों का उपयोग आवश्यकता अनुसार कम से कम करते हुए कृषक को कम लागत से दीर्घकालीन स्थिर व अच्छी गुणवत्ता वाली पारम्परिक पद्धति ळें

जैविक खेती के महत्व

1. भूमि की उर्वरा शक्ति में टिकाऊपन।
2. जैविक खेती प्रदुषण रहित।
3. कम पानी की आवश्यकता।
4. पशुओं का अधिक महत्व (समवर्धन)
5. फसल अवशेषों को खपाने की समस्या नहीं।
6. अच्छी गुणवत्ता की पैदावार।
7. कृषि मित्रजीव सुरक्षित एवं संख्या में बढ़तरी।
8. स्वास्थ्य में सुधार।
9. कम लागत।
10. अधिक लाभ।
11. भूमि की उर्वरा शक्ति में टिकाऊपन।
12. जैविक खेती प्रदुषण रहित।
13. कम पानी की आवश्यकता।
14. पशुओं का अधिक महत्व (समवर्धन)

15. फसल अवशेषों को खपाने की समस्या नहीं।
16. अच्छी गुणवत्ता की पैदावार।
17. कृषि मित्रजीव सुरक्षित एवं संख्या में बढ़तरी।
18. स्वास्थ्य में सुधार।
19. कम लागत।
20. अधिक लाभ।

जैविक खेती का उद्देश्य

इस प्रकार की खेती करने का मुख्य उद्देश्य यह है कि रासायनों उर्वरकों का उपयोग न हो तथा इसके स्थान पर जैविक उत्पाद का उपयोग अधिक हो लेकिन वर्तमान में बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए तुरन्त उत्पादन में कमी न हो अतः इसे (रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को) वर्ष प्रति वर्ष चरणों में कम करते हुए जैविक उत्पादों को ही प्रोत्साहित करना है। जैविक खेती का प्रारूप निम्नलिखित प्रमुख क्रियाओं के क्रियान्वित करने से प्राप्त किया जा सकता है :–

1. कार्बनिक खादों का उपयोग।
2. जीवाणु खादों का प्रयोग।
3. फसल अवशेषों का उचित उपयोग।
4. जैविक तरीकों द्वारा कीट व रोग नियंत्रण।
5. फसल चक्र में दलहनी फसलों को अपनाना।
6. मृदा संरक्षण क्रियाएँ अपनाना।

जैविक खेती से लाभ

1– जैविक खेती से मृदा उर्वरता एवं गुणवत्ता में सुधार संभव है।
2– जैविक खेती से जीवांथ एवं मृदा सूक्ष्म तत्वों में वृद्धि संभव है।
3– दलहनी फसलों के उपयोग से नत्रजन स्थरीकरण क्रिया में वृद्धि होती है।
4– जैविक खेती जैव विविधता, प्रकृति खेती, स्वास्थ्य संरक्षण तथा पर्यावरण की दृष्टि से लाभदायक है।
5– मनुष्य एवं पशुओं को विषमुक्त स्वस्थ्य भोजन एवं चारा उपलब्ध होगा।
6– जैविक खेती से न्यूनतम लागत कृषि तकनीक का आधार है।
7– जैविक उत्पाद का उपयोग करने से मनुष्यों एवं पशुओं में बीमारियों के प्रति रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है।
8– जैविक खेती अपनाकर कृषक स्वावलम्बी बन सकेंगे तभी खेती लाभ का धंधा बन पायेगा।
9– जैविक खेती अपनाकर बाह्य आदानों पर निर्भरता को कम किया जा सकता है।
10– जैविक खेती से ही मृदा में जलधारण क्षमता में वृद्धि की जा सकती है।

11– जैविक खेती अपनाकर ग्रामों में स्वच्छता को बढ़ावा दिया जा सकता है।
12– जैविक खेती उत्पादन का मूल्य रासायनिक उत्पाद से बाजार में अधिक मिलता है।
13– जैविक खेती अपनाकर किसान खेती को टिकाऊ एवं स्थाई बना सकते हैं।
14– जैविक खेती के द्वारा पर्यावरण संतुलन स्थापित किया जा सकता है।
15– जैविक खेती से मृदा में उपस्थित लाभदायक जीवों का संरक्षण संभव है।
16– जैविक खेती को सभी वर्ग के कृषक आसानी से अपना सकते हैं।
17– जैविक खेती में उपयोग होने वाले जैविक खाद एवं जैविक कीटनाशकों को कृषक स्वयं तैयार कर सकता है।
18– जैविक खेती में प्रयोग होने वाले जैविक कीटनाशक या खाद कम या अधिक प्रयोग होने पर फसल एवं खेतों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालते है।

जैविक खेती प्रारम्भ करने के पूर्व आवश्यक है

(1) जिस रकबे में जैविक खेती की जाना है उस रकबे के पूर्ण क्षेत्र में जैविक खेती ही करना होगा। जैविक एवं अजैविक खेती एक साथ करना अमान्य है।
(2) जैविक खेती में खरपतवार नियंत्रण हेतु प्रथम वर्ष गहरी जुताई करना भी एक कारगर उपाय है।
(3) जैविक खेती के पूर्व प्रक्षेत्र की मेड़ों पर उपलब्ध कचरा एवं अन्य वानस्पतिक समुदाय को समाप्त करना अति आवश्यक है क्योंकि मेड़ों पर उपलब्ध खरपतवारों के बीज खेतों में स्थानान्तरित हो जाते हैं। वर्तमान में अभी ऐसे जैविक खरपतवारनाशी नहीं है जिनके छिड़काव से खरपतवार का नाश किया जा सके। जैविक खेती में खरपतवार नियंत्रण का कारगर उपाय निदाई एवं खेतों की तैयारी है।
(4) जैविक खेती शुरू करने से पूर्व प्रति हैक्टर 01 नाडेप एवं 02 वर्मी कम्पोस्ट के मान से तैयार करना चाहिए। यदि नाडेप कम्पोस्ट एवं वर्मी कम्पोस्ट खेत पर तैयार नहीं किये गये तो जैविक खेती की लागत बढ़ जाती है तथा बाजार से क्रय की गई खाद महॅगी एवं शुद्धता पर प्रश्नचिन्ह लग सकता है।
(5) नाडेप एवं वर्मी कम्पोस्ट के भरने हेतु गोबर मुख्य कम्पोनेन्ट हैं। अतः प्रति हैक्टेयर एक गोवन्स पाले जाने भी आवश्यक है।
(6) तैयार किये गये नॉडेप एवं वर्मी कम्पोस्ट हेतु एक निर्धारित कार्यक्रम तैयार किया जावे एवं भरने हेतु फसल अवशेष एवं कचरा की उपलब्धता को दृष्टिगत रखते हुए स्रोतों को सूचीबद्ध किया जाना आवश्यक है।
(7) जैविक खेती में उपयोग में लाये जाने वाले जैविक कीटनाशक की तैयारी बोई जाने वाली फसलों के आधार पर एक माह पूर्व करना आवश्यक है।
(8) हरी खाद सन, ढेंचा, उड़द, मूॅग इत्यादि से तैयार की जावे।
(9) जैविक खेती लगातार तीन वर्ष तक करने से आदान (खाद एवं कीटनाशी) की लागत घट जाती है तथा उत्पादन में क्रमशः बढ़ौतरी होती है इससे यह मुख्य

लाभ है कि यदि जैविक उत्पाद सामान्य बाजार मूल्य पर बेचा जावे तो भी लाभ की स्थिति रहती है।

(10) जैविक खेती हेतु समस्त आदान खेत स्तर पर तैयार किये जाते हैं इसी कारण जैविक खेती की लागत कम एवं लाभ अधिक होता है।

उपरोक्त अनुसार कार्य करने पर जैविक खेती में सफलता हासिल हो सकती है।

जैविक खेती से होने वाले लाभ

1. **कृषिकों की दृष्टि से लाभ–**
   भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि हो जाती है।
   सिंचाई अंतराल में वृद्धि होती है।
   रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने से कास्त लागत में कमी आती है।
   फसलों की उत्पादकता में वृद्धि।
   बाजार पर निर्भरता कम हो जाती है।
2. **मिट्टी की दृष्टि से–**
   जैविक खाद के उपयोग करने से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है।
   भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ती है।
   भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होगा। मिट्टी का गैसीय संतुलन बना रहता है।
3. **पर्यावरण की दृष्टि से–**
   भूमि के जल स्तर में वृद्धि होती है। मिट्टी खाद पदार्थ और जमीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है। कचरे का उपयोग, खाद बनाने में, होने से बीमारियों में कमी आती है। फसल उत्पादन की लागत में कमी एवं आय में वृद्धि अंतरराष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद की गुणवत्ता का खरा उतरना।

जैविक खेती, की विधि रासायनिक खेती की विधि की तुलना में बराबर या अधिक उत्पादन देती है अर्थात जैविक खेती मृदा की उर्वरता एवं कृषकों की उत्पादकता बढ़ाने में पूर्णतः सहायक है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में जैविक खेती की विधि और भी अधिक लाभदायक है। जैविक विधि द्वारा खेती करने से उत्पादन की लागत तो कम होती ही है इसके साथ ही कृषक भाइयों को आय अधिक प्राप्त होती है तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद अधिक खरे उतरते हैं। जिसके फलस्वरूप सामान्य उत्पादन की अपेक्षा कृषक भाई अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। आधुनिक समय में निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या, पर्यावरण प्रदूषण, भूमि की उर्वरा शक्ति का संरक्षण एवं मानव स्वास्थ्य के लिए जैविक खेती की राह अत्यन्त लाभदायक है। मानक जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए नितान्त आवश्यक है कि प्राकृतिक

संसाधन प्रदूषित न हों, शुद्ध वातावरण रहे एवं पौष्टिक आहार मिलता रहे, इसके लिये हमें जैविक खेती की कृषि पद्धतियों को अपनाना होगा जो कि हमारे नैसर्गिक संसाधनों एवं मानवीय पर्यावरण को प्रदूषित किये बगैर समस्त जनमानस को खाद्य सामग्री उपलब्ध करा सकेगी तथा हमें खुशहाल जीने की राह दिखा सकेगी।

जैविक खेती के मार्ग में बाधाएँ

1. भूमि संसाधनों को जैविक खेती से रासायनिक में बदलने में अधिक समय नहीं लगता लेकिन रासायनिक से जैविक में जाने में समय लगता है।
2. शुरूआती समय में उत्पादन में कुछ गिरावट आ सकती है, जो कि किसान सहन नहीं करते हैं। अतः इस हेतु उन्हें अलग से प्रोत्साहन देना जरूरी है।
3. आधुनिक रासायनिक खेती ने मृदा में उपस्थिति सूक्ष्म जीवाणुओं को नष्ट कर दिया, अतः उनके पुनः निर्माण में 3–4 वर्ष लग सकते हैं।

जैविक खेती के लिए सस्य प्रबंधन

(1) **समय पर बुवाई :–**सर्वप्रथम ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई की जावे। अलग–अलग फसलों के लिए तथा अलग–अलग क्षेत्रों के लिए बोने के सही समय की सिफारिश की गई है, जिससे कीट–व्याधि के प्रकोप से बचा जा सके। अतः फसल एवं क्षेत्र के अनुसार समय पर बुवाई करें।

(2) **खरपतवार नियंत्रण :–**खरपतवार नियंत्रण हेतु गर्मी की जुताई तथा नींदा के अंकुरण के बाद पुनः जुताई कर, बुवाई करना चाहिए।

(3) **सही किस्मों का चुनाव :–**यदि क्षेत्र विशेष में किसी कीट–व्याधि का प्रकोप ज्यादा हो तो प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें।

(4) **सही फसल चक्र :–**फसल चक्र में दलहनी फसलों का चुनाव अवश्य करें, जिससे भूमि की उर्वराशक्ति संरचना बनी रहे।

(5) **खरपतवार नियंत्रण हेतु यंत्रों का प्रयोग :–** संभवतः कतार में बोनी करें तथा नींदा नियंत्रण हेतु कतार में चलने वाले या हस्तचलित कृषि यंत्रों का उपयोग करें।

(6) **स्वच्छ खेती :–**ज्यादातर कीट खेत की मेड़ों पर तथा घास–फूस में पनपते हैं व अण्डे देते हैं। अलग–अलग कीट–व्याधि के पनपने का स्थान अलग होता है, जिससे जिस फसल की खेती कर रहे हैं, उसके कीट–व्याधि के नियंत्रण की कल्चरल, मेकेनिकल तरीके की जानकारी एकत्र करें तथा स्वच्छता रखकर उस पर नियंत्रण करें।

(7) **लगातार एक ही फसल न लें :–**फसल चक्र या फसल प्रणाली का चक्र निर्धारित करते समय ध्यान रखें, लगातार एक फसल या एक ही कुल की फसल एक ही खेत में न लें। यदि दलहन फसल का फसल चक्र में समावेश करना हो तब भी खरीफ, रबी, जायद में बदल–बदलकर फसल लें।

(8) **हरी खाद लें :–**फसल चक्र में कोशिश करें कि कम से कम दो वर्ष में एक बार हरी खाद का समावेश हो। हरी खाद लने से पौधों को नत्रजन, स्फुर, पोटाश तो मिलता है, साथ ही हरी खाद खेत की निचली पत में उपस्थित पोषक तत्वों को ग्रहण कर, मिट्टी में मिलाने के बाद दूसरी फसलों को पोषक तत्व उपलब्ध कराता है।

(9) **पशुओं के चारे की व्यवस्था अपने खेत में ही करें :–**फसल चक्र बनाते समय याद रखें कि सभी पालतू पशुओं के लिए चारे–भूसे, चोकर आदि की व्यवस्था खेत में लगाने वाली फसलों से ही हो और उनके गोबर, मलमूल व अपशिष्ट पदार्थों से कम्पोस्ट व वर्मी कम्पोस्ट खाद बनाई जावे जिसमें रसायन न हो।

भूमि की उपजाऊ शक्ति : जैविक खाद

भारत में शताब्दियों से गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद व जैविक खाद का प्रयोग विभिन्न फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए किया जाता रहा है। इस समय ऐसी कृषि विधियों की आवश्यकता है जिससे अधिक से अधिक पैदावार मिले तथा मिट्टी की गुणवत्ता प्रभावित न हो, रासायनिक खादों के साथ–साथ जैविक खादों के उपयोग से मिट्टी की उत्पादन क्षमता को बनाए रखा जा सकता है। जिन क्षेत्रों में रासायनिक खादों का ज्यादा प्रयोग हो रहा है वहॉ इनका प्रयोग कम करके जैविक खादों का प्रयोग बढ़ाने की आवश्यकता है। जैविक खेती के लिए जैविक खादों का प्रयोग अतिआवश्यक है, क्योंकि जैविक कृषि में रासायनिक खादों का प्रयोग वर्जित है। ऐसी स्थिति में पौधों को पोषक तत्व देने के लिए जैविक खादों, हरी खाद व फसल चक्र में जाना अब आवश्यक हो गया है। थोड़ी सी मेहनत व टैक्नॉलॉजी का प्रयोग करने से जैविक खाद तैयार की जा सकती है जिसमें पोषक तत्व अधिक होंगे और उसे खेत में डालने से किसी प्रकार की हानि नहीं होगी और फसलों की पैदावार भी बढ़ेगी।

जैविक विधियों द्वारा पोषक तत्व प्रबंधन :–पौधों को अपना जीवन चक्र पूर्ण करने के लिये अनेक प्रकार के पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है जिनमें से पौधों को कार्बन, हाईड्रोजन तथा ऑक्सीजन पानी एवं हवा से प्राप्त हो जाते हैं। सूक्ष्म तत्वों जैसे–जस्ता, लोहा, तांबा, बोरॉन, मॉलिब्डेनम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, क्लोरीन एवं मैगनीज आदि की बहुत कम आवश्यकता होती है। अतः फसल अवशेषों तथा गोबर की सड़ी खाद के नियमित उपयोग से उक्त सूक्ष्म तत्वों की पूर्ति हो जाती है, साथ ही पोटाश की कमी की पूर्ति भी हो जाती है। गंधक की पूर्ति जिप्सम द्वारा फास्फोरस की कमी को जीवाणु खाद एवं बीज कल्चर द्वारा उपचारित करके पूरा किया जा सकता है। सबसे महत्वपूर्ण तत्व नत्रजन की पौधों के लिये पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता सुनिश्चित करना जैविक खेती का सबसे महत्वपूर्ण काम है क्योंकि नत्रजन का जमीन में संचयन नहीं किया जा सकता है। नत्रजन जमीन के अंदर कार्बन पर निर्भर करती है और कार्बन की मात्रा जमीन के तापमान पर निर्भर करती है। अधिक तापमान के

कारण जमीन में कार्बन की कमी बनी रहती है। निम्नलिखित जैविक विधियों द्वारा नत्रजन की पूर्ति की जा सकती है :–

1. वर्ष में एक बार दलहनी फसलों की बुआई अवश्य करें, क्योंकि दलहन फसलों की जड़ों में राइजोबियम की ग्रंथियॉ होती है जो कि नत्रजन स्थिरीकरण करने का कार्य करती ह।
2. फसलों के अवशेषों में नत्रजन होता है इसलिये इसका उपयोग कम्पोस्ट खाद बनाने के लिये करें।
3. ग्वार, ढेचा व सनई की फसल बोकर उसका हरी खाद के लिये उपयोग करें क्योंकि हरी खाद से जमीन में नत्रजन व कार्बन की मात्रा बढ़ती है।
4. दलहनी फसलों की बुआई राइजोबियम जीवाणु खाद से उपचारित करने के बाद ही करें, क्योंकि यह जीवाणु पौधों की जड़ों में रहकर वातावरण की नत्रजन को सीधे पौधों को उपलब्ध कराते हैं साथ ही अगले मौसम में उगाई जाने वाली फसलों के लिये नत्रजन की उपलब्धता बढ़ाते हैं।
5. ज्वार, बाजरा व मक्का आदि का बीज एजेटोबेक्टर जीवाणु खाद से उपचारित कर ही बोना चाहिये, क्योंकि यह जीवाणु वायुमण्डल में उपस्थित नत्रजन को पौधों को उपलब्ध कराता है। जब यह जीवाणु कर जाता है तो इसके शरीर की नत्रजन कुछ समय बाद पौधों को मिल जाती है।

6. धान की फसल में एजोला का उपयोग कर वायु की नत्रजन का उपयोग किया जा सकता है।
7.

जैविक उर्वरकों द्वारा पोषक तत्व प्रबंधन

जैविक उर्वरकों का प्रयोग कर भूमि की अधोसंरचना को सुरक्षित रखते हुये पौधों को उनकी आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा की पूर्ति की जाती है जैविक उर्वरक के प्रकार :–नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने वाले जैविक उर्वरक।

राइजोबियम :–यह एक सहजीवी जीवाणु है जो कि पौधों की जड़ों में रहकर वायुमण्डल की नत्रजन को इकट्ठा कर पौधों को उपलब्ध कराता है। इसकी 750 ग्राम मात्रा से 80 से 100 किलो बीज उपचारित करने पर यह 20 किलोग्राम प्रति हैक्टर नाईट्रोजन का लाभ देता है। यह समस्त दलहनी फसलों तथा मूँगफली, ग्वार, ढेचा, सोयाबीन, बरसीम आदि हेतु उपयुक्त होते हैं।

एजेटोवेक्टर :–यह स्वतंत्र रूप से पौधों की जड़ के पास रहकर वायुमंडल की नाईट्रोजन को एकत्र करता है। इसकी 750 ग्राम मात्रा से 80 से 100 किलो बीज उपचारित करने पर यह 10 से 20 किलोग्राम प्रति हैक्टर नाईट्रोजन का लाभ देता है। इसका प्रयोग टमाटर, आलू, बैंगन, गोभी वर्गीय सब्जियॉ, कपास, गन्ना, चावल, ज्वार, बाजरा तथा मक्का आदि में किया जाता हे।

एजोस्पाईरिलम :–यह मृदा में नाईट्रोजन एकत्र करने वाला एक महत्वपूर्ण जीवाणु है जो कि जड़ों में गॉठें नहीं बनाते हैं किन्तु जड़ों में मण्डल बनाकर रहते हैं और वायुमंडल की नाईट्रोजन को उपलब्ध कराते हैं। इसके प्रयोग से 15 से 20 किलो प्रति हैक्टर नाईट्रोजन की बचत होती है। इसका प्रयोग मिर्च, प्याज, ज्वार, बाजरा, राई चारे वाली फसलों में तथा शासकीय फसलों में किया जा सकता है।

नीलहरित शैवाल :–यह वायुमंडल की नाईट्रोजन को एकत्रित कर पौधों को उपलब्ध कराता है। इसका प्रयोग धान की फसल पर किया जाता है इसके प्रयोग से 20 से 25 किलोग्राम प्रति हैक्टर नाईट्रोजन की बचत होती है। 10 किलोग्राम प्रति हैक्टर नीलहरित शैवाल का धान की फसल में उपयोग करने से 20 से 55 किलोग्राम वायुमंडलीय नाईट्रोजन का स्थरीकरण करता है।

एजोला :–एजोला एक जल फर्म है। एजोला द्वारा मिट्टी में नाईट्रोजन स्थिरीकरण का कार्य किया जाता है। इसमें 3.5 प्रतिशत नाईट्रोजन तथा कई तरह के कार्बनिक पदार्थ होते हैं जो कि उर्वरा शक्ति को बढ़ाते हैं इसका प्रयोग धान के खेतों में किया जाता है। इसके प्रयोग से 5 से 15 प्रतिशत तक इसके उत्पादन में वृद्धि होती है।

फास्फोरस को घुलनशील तथा उपलब्ध कराने वाले जैसे उर्वरक

1. **माइक्रोफास :–**मृदा में फास्फोरस घुलनशील एवं अघुलशील दोनों अवस्थाओं में पाया जाता है। रासायनिक रूप से फास्फोरस जब मृदा में दिया जाता है तो उसका उपयोग पौधे केवल 10 से 30 प्रतिशत तक ही कर पाते हैं शेष फास्फोरस अघुलनशील अवस्था में परिवर्तित हो जाता है जिससे पौधे उसका उपयोग नहीं कर पाते हैं। यह सूक्ष्म जीव उस अघुलनशील फास्फोरस को विलय कर घुलनशील बनाकर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इसका प्रयोग सभी फसलों में किया जा सकता है। इसके प्रयोग से 10 से 25 प्रतिशत तक उत्पादन में वृद्धि होती है।

2. **न्यूट्रोलिंक या बैग कवक :–**
फास्फोरस मृदा में निम्न चलनशील होता है जिससे यह पौधों की जड़ों तक आसानी से नहीं पहुॅचता है। न्यूट्रोलिंक पौधों की जड़ों में वृद्धि करके मृदा में उपस्थित फॉस्फोरस को पौधों को उपलब्ध कराता है। जिसका प्रयोग सभी फसलों के लिये किया जा सकता है। बैक कवक की मात्रा 15 से 220 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर उपयोग करते हैं।

जैविक खादें/कम्पोस्ट खाद

1. **कम्पोस्ट खाद :–**खेतों में पर्याप्त मात्रा में फसल अवशिष्ट एवं कार्बनिक अवशिष्ट उपलब्ध होते हैं, इनके उचित उपयोग से अच्छी गुणवत्ता वाली कम्पोस्ट खाद तैयार की जा सकती है

2. **हरी खाद :–**इस क्रिया में वानस्पतिक सामग्री को अधिकांशतः हरे दलहनी पौधों को उसी खेत में उगाकर जुताई कर मिट्टी में मिला देते हैं जैसे सनई, मूॅग, ढेचा आदि।

3. **वर्मी कम्पोस्ट :–**केचुआ खाद का उपयोग करके फसलों के आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति की जा सकती है। इस खाद में बदबू नहीं हाती है। मच्छर मक्खी नहीं बढ़ते हैं। जिससे वातावरण स्वस्थ रहता है इसमें सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ–साथ ढाई से तीन प्रतिशत नाइट्रोजन, एक से डेढ़ प्रतिशत फास्फोरस एवं डेढ़ से दो प्रतिशत पोटाश प्राप्त होता है।

4. **शीघ्र खादें :–**1. भभूत अमृत पानी, 2. अमृत संजीवनी, 3. मटका खाद 5. बायोसेलिरी का उपयोग करना :–यह खेती के लिये अति उत्तम खाद है। इसमें नाइट्रोजन 5 से 2 प्रतिशत तक फास्फोरस एक प्रतिशत तथा पोटाश एक प्रतिशत तक होता है। बायोगैस संयंत्र से निकली सेलिरी में 20 प्रतिशत नाइट्रोजन अमोनिकल नाइट्रोजन के रूप में होता है अतः यदि इसका तुरन्त उपयोग खेत में नालियॉ बनाकर अथवा सिंचाई के पानी में मिलाकर खेत में छोड़ दिया जाये तो इसका लाभ रासायनिक खाद की तरह ही तुरन्त प्राप्त होता है और उत्पादन में 10 से 20 प्रतिशत तक बढ़त हो सकती है। इसे सिंचाई रहित खेती में एक हैक्टेयर में करीब 5 टन और सिंचित खेती में 10 टन प्रति हैक्टेयर के मान से डालना चाहिये।

जैव उर्वरकों के उपयोग के तरीके

1. **बीज उपचार द्वारा :–** बीज उपचार के लिये 200 ग्राम जैव उर्वरक एक एकड़ में बोये जाने वाले बीज के लिये पर्याप्त होता है। गन्ने एवं आलू के लिये यह मात्रा एक से डेढ़ किलोग्राम प्रति एकड़ होती है बीज उपचारित करने के लिये एक लीटर पानी 100 ग्राम गुड़ डालकर उबालते हैं और इसे ठण्डा होने पर जैव उर्वरक को इसमें अच्छी तरह घोलकर मिलाते हैं फिर इस घोल को बीजों पर थोड़ा–थोड़ा डालकर इस प्रकार स्वच्छ हाथों से मिलाते हैं कि समस्त बीजों पर एक परत के रूप में जम जायें। इस उपचारित बीज को छायादार स्थान में सुखाते हैं और बोनी हेतु शीघ्र उपयोग करते हैं।

2. **मृदा उपचार द्वारा :–**4 से 5 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से जैव उर्वरक को लेकर 50 से 60 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद में अच्छी तरह मिलाकर एक समान रूप से खेत में बिखेर देते हैं। बेग कवक का 15 से 20 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से उपयोग करते हैं।

3. **पौध उपचार द्वारा :–** जिन फसलों की पौध लगाई जाती है उनकी रोपाई के पूर्व जड़ों को उपचारित करते हैं। 200 ग्राम जैव उर्वरक का घोल 2000 पौधों के लिये पर्याप्त होता है।

जैविक खेती में पोषक तत्वों का प्रबंधन :–

(1) **मृदा की उर्वरता बनाये रखना :–**सही फसल द्वारा मृदा की उर्वरता बनाई रखी जा सकती है। इसमें दलहनी फसलों का समावेश फसल चक्र और अंतःवर्तीय फसल के रूप में कर सकते हैं।

(2) **खेत के सभी अवशेषों का खाद में उपयोग :–**खेती से निकलने वाले सभी अवशेष जैसे–खरपतवार, मेड़ में घास–फूस, फसलों के खरपतवार, जानवरों के अवशेष का उपयोग खाद बनाने में किया जाता है।

(3) **जैविक खाद :–**जैविक खाद से अर्थ है भारी मात्रा में उपयोग आने वाली खाद, जिसमें फसलों के अवशेष, खरपतवार, पौधों की पत्तियॉ, गोबर, मूत्र, मुर्गी की खाद, घरेलू उपयोग किये गए पौधों के अवशेष आदि का समावेश है। इसके अन्तर्गत निम्न कम्पोस्ट आते हैं :–

(1) **गोबर की खाद :–**जानवरों के बाड़े के अवशिष्ट पदार्थों की खाद जिसमें गोबर, अवशिष्ट, मल–मूत्र का समावेश होता है।

(2) **कम्पोस्ट :–**गोबर, कूड़ा–करकट, राख से गड्ढों को भरकर या नाडेप कम्पोस्ट।

(3) **वर्मी कम्पोस्ट :–**वर्मी–कम्पोस्ट यानि केंचुओं की मदद से निर्मित जैविक खाद। इसे किसान अपने प्रक्षेत्र में गोबर की खाद, पौधों के अवशेष, पत्तों आदि से बना सकते हैं। वर्मी कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा कम्पोस्ट बनाने के लिए उपयोग किये गये पदार्थों पर निर्भर करती है।

(4) **हरी खाद :–**हरी खाद के लिए ढेंचा, सन, सिम्बेनिया रोस्ट्रेटा, तुड़ाई के बाद बरबटी, मूँग आदि का उपयोग किया जा सकता है। हरी खाद खेत में बोकर या बाहर से लाकर खेत में डाली जा सकती है। खेत में बोकर बनाई गई हरी खाद से ज्यादा लाभ होता है।

(5) **खली :–**विभिन्न प्रकार की खली भी पोषक के प्रबन्धन का अच्छा स्त्रोत है। प्रदेश में नीम की खली आसानी से प्राप्त हो जाती है। खेत में फसल लगाने व उससे निकलने वाली खली की उपलब्धता के अनुसार खली का चयन किया जा सकता है।

(6) **कान्सन्ट्रेटेड कम्पोस्ट :–** इस प्रकार की कम्पोस्ट में उपरोक्त पदार्थों के साथ रॉक फास्फेट, पी.एस.बी., ट्राईकोडर्मा विरडी भी मिलाया जाता है। कम्पोस्ट का ट्रीटमेंट अच्छी तरह सड़ी हुई खाद में किया जाता है।

(7) **जैव उर्वरक :–** जैविक खेती में साधारणतः सभी पोषक तत्वों का प्रबन्धन प्रक्षेत्र की फसल , जानवरों के मल–मूत्र, घास–फूस से किया जाता है। लेकिन जैव–उर्वरकों को बाजार से खरीदने की जरूरत होती है। कुछ जैव–उर्वरकों जैसे नील हरित काई (अजोला) प्रक्षेत्र में बनाई जा सकती है। कुछ जैव–उर्वरकों के बारे में जानकारी नीचे दी गई है :–

(1) **नत्रजन के लिये :–**राइजोबियम फलीदार फसलों के लिए, एजोटोबेक्टर, एजोस्पाईरिलम बिना फलीदार फसलों के लिए, एजोटोबैक्टर केवल गन्नों की खेती के लिए, नील हरित शैवाल और ऐजोला खड़े पानी वाली धान की फसल के लिए।

(2) **फास्फोरस के लिए :–**कुछ घोलक जीवाणु (पी.एस.बी.) जो अघुलनशील फास्फोरस को घोलकर पौधों को उपलब्ध कराता है।

(3) **पोटेशियम के लिए :–**जीवाणु सरेट्यूरिया ओरेनरिया स्थिर पोटेशियम को अवशोधी रूप में उपलब्ध कराता है।

(4) **सल्फर के लिए :–** एजोटोबेक्टर पास्ट्यूरिएनस सल्फर की उपलब्धता बढ़ाता है।

(5) **सिलीकेट एवं जिंक के लिए :–**कुछ बेसिलस प्रजाति के जीवाणु सिलीकेट एवं जिंक को घुलनशील बनाने में सहायक होते हैं।

(6) **पादप वृद्धि के लिये :–**जीवाणु स्यूडोमोनास लोरोसेन्स पादप वृद्धि के लिए उपयुक्त होता है, कम्पोस्टिंग में–सेल्यूलायटिक कवक कल्चर जैसे धान के पैरा के विघटन हेतु ट्रोइकोडर्मा एवं फॉस्फेटिका एवं एजोटोबेक्टर कल्चर का प्रयोग।

विभिन्न फसलों हेतु उपयुक्त जैव उर्वरकों एवं उनकी अनुशंसित मात्रा

उपयुक्त जैव उर्वरक (सूक्ष्म जीवों) की सूची निम्नलिखित है :–

क्र.	जैव उर्वरक एवं अनुशंसित मात्रा	फसल
1.	राइजोबियम 200 ग्राम + पी.एस.बी. 200 ग्राम/10 कि.ग्रा. बीज की दर।	दलहनी फसले जैसे : सोयाबीन, चना, अरहर, मूँग, उड़द, मसूर, मॅगफली, मटर, बरसीम एवं सभी दलहन फसल।
2.	एजोटोबेक्टर 200 ग्रा./पी.एस.बी. 300 ग्रा./10 कि.ग्रा. बीज के लिए	गेहूँ, मक्का, धान, ज्वार, कपास, आलू, बैंगन, टमाटर,
3.	एजोस्पिरिलम 200 ग्रा. + पी.एस.बी. /10 कि.ग्रा. बीज के लिए	सूरजमुखी, धान, गन्ना, हरे चारे वाली घास कुल की फसलें।
4.	एजोटोबेक्टर 1 कि.ग्रा. + पी.एस.बी. 1 कि.ग्रा. का तैयार घोल/एकड़	टमाटर, बैंगन, मिर्च, फूलगोभी अन्य रोपित सब्जियों के लिए।
5.	5 कि.ग्रा. एजोटोबेक्टर को पानीमें मिलाकर गन्ना को डुबोये	

जैव उर्वरकों की प्रयोग तकनीक

अ. **बीज निवेशन :–**एक एकड़ बोता फसल में बीज निवेशन के लिए एक पैकेट (150–250 ग्राम) जीवाणु कल्चर पर्याप्त होता है। बोता फसल के लिए एक पैकेट कल्चर को 250–500 मिली पानी में घोलें तथा 20–40 कि.ग्रा. बीज के ऊपर घोल छिड़के। उसे हाथ से रगड़कर बीज के ऊपर एक समान परत चढ़ायें। बीजों में कल्चर छॉय में करें तथा तुरंत बोनी करें। फलीदार फसलों के लिए बीज निवेशन ही अत्याधिक लाभप्रद एवं उपयुक्त माना गया है। बीज निवेशन हेतु तरल जैव उर्वरक भी लाभप्रद पाये गये हैं।

ब. **मिट्टी निवेशन :–**1–2 कि.ग्रा. कल्चर चूर्ण या 50 मि.ग्रा. बीज तरल जैविक उर्वरकों को 25–50 कि.ग्रा. अच्छी सड़ी गोबर की खाद या भुरभुरी मिट्टी में मिलाकर बोनी के पहले एक एकड़ खेत में समान रूप से छिड़के। नमी कम होने पर तुरन्त सिंचाई करें। इस तकनीक को प्रायः सभी तरह की फसलों के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है, लेकिन इस विधि में कल्चर की मात्रा अधिक लगती है एवं लाभ अपेक्षाकृत कम मिलता है। बोता धान में इस विधि का प्रयोग धान बुवाई के समय या बियासी के समय कर सकते हैं।

स. **पौध जड़ निवेशन :–**एक एकड़ रोपाई हेतु जड़ों के निवेशन के लिये 2 पैकेट कल्चर चूर्ण या 50 मि.ली. तरल जैविक उर्वरक को जल की आवश्यक मात्रा में घोल बनाकर पौधों की जड़ों को 10–15 मिनट तक भिगोकर रखें तथा रोपाई करें। रोपा धान के लिये इस विधि से कल्चर निवेशन अत्याधिक लाभप्रद पाया गया है।

द. **कन्द उपचार :–**15 लीटर पानी में प्रति 2 कि.ग्रा. जैव उर्वरक की दर से घोलकर कन्द को 5 से 10 मिनट तक डुबायें या कन्द पर समान रूप से छिड़काव कर दें तथा उपचारित कन्दों की तुरन्त बुवाई करें।

इ. **जैविक खेती से लाभ :–**

(1) कार्बनिक खादों का प्रयोग उच्च उत्पादकता एवं अच्छी गुणवत्ता की फसलों को पैदा करने की क्षमता प्रदान करती है।

(2) जैविक खाद पौधों द्वारा चाहे गये सभी आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति करती है।

(3) जैविक खाद पौधों की बढ़वार एवं पादक कार्यिकी गतिविधियों में सुधार करती है।

(4) नाइट्रोजन एवं फास्फोरसधारी उर्वरकों, कीटनाशी, शाकनाशी आदि का प्रयोग न होने की वजह से प्रदूषण का खतरा कम रहता है। इनका कोई अवशेषिक प्रभाव भी नहीं होता है, जिससे पशुओं एवं मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ता है।

(5) कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

(6) मशीनों के कम प्रयोग की आवश्यकता होती है तथा फसल के खराब होने का खतरा भी कम रहता है।

(7) इससे कृषि उत्पादन में लागत कम लगती है तथा मृदा स्वास्थ्य में भी सुधार होता है।

(8) प्राकृतिक संसाधनों का सह उपयोग होता है।

(9) जैविक खेती द्वारा पैदा किए गए उत्पादों की कीमत अधिक मिलती है।

(10) जैविक खेती से पैदा हुए उत्पादों की गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

जैविक खेती हेतु विभिन्न प्रकार के खाद एवं कीटों के नियंत्रण हेतु जैविक कीटनाशी की आवश्यकता होती है। मुख्य खाद एवं कीटों के नियंत्रण की निम्नानुसार विधियॉ है :–

(1) **बायोगैस स्लरी :–**बायोगैस संयंत्र में गोबर गैस की पाचन क्रिया के बाद 25 प्रतिशत ठोस पदार्थ का रूपान्तर। गैस के रूप में होता है और 75 प्रतिशत ठोस पदार्थ का रूपान्तरण खाद के रूप में होता है जिसे बायोगैस स्लरी कहा जाता है। दो घनमीटर के गैस संयंत्र में 50 किलोग्राम गोबर प्रतिदिन या 18–20 टन गोबर एक वर्ष में डाला जाता है। उस गोबर से 80 प्रतिशत नमी युक्त करीब 10 टन बायोगैस स्लेरी

खाद के रूप में प्राप्त होता है। ये खेती के लिये अति उत्तम खाद होता है। इसमें 1. 5–2 प्रतिशत नत्रजन, 1 प्रतिशत स्फुर एवं 1 प्रतिशत पोटाश होता है।

बायोगैस संयंत्र से निकली स्लरी से 20 प्रतिशत नाइट्रोजन, अमोनिकल नाइट्रोजन के रूप में होती है। अतः यदि इसका तुरन्त उपयोग खेत में सिंचाई नाली के माध्यम से किया जाये तो इसका लाभ रासायनिक खाद की तरह फसल पर तुरन्त होता है और उत्पादन में 10–20 प्रतिशत बढ़त हो सकती है। स्लरी के खाद में नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश के अतिरिक्त सूक्ष्म पोषक तत्व एवं ह्यूमस भी होता है जिससे मिट्टी की संरचना में सुधार होता है। यह खाद असिंचित खेती में 5 टन एवं सिंचित खेती में 10 टन प्रति हैक्टर की आवश्यकता होगी। ताजी गोबर गैस स्लरी सिंचित खेती में 8–10 टन प्रति हैक्टर लगेगी। सूखी खाद का उपयोग अन्तिम बखरनी के समय एवं ताजी स्लरी का उपयोग सिंचाई के दौरान करें।

(2) **नील हरित काई :–**नील हरित काई प्रमुख रूप से कुछ ऐसे विशेष सूक्ष्म जीवाणुओं का समूह है जो वायु मंडल में उपस्थित गैसीय नत्रजन तत्व को स्थिर व स्थापित करने की क्षमता रखती है। नील हरित काई का प्रयोग धान फसल में किया जाता है। धान फसल में इसके प्रयोग से लगभग 20–25 किलोग्राम नत्रजन प्रति हैक्टर की पूति होती है। नील हरित काई तैयार करने के लिये 2 X 4 X 1 फीट आकार का टांका, कच्चा अथवा पक्का जमीन के ऊपर तैयार किया जाता है। कच्चे टांके में पानी के रिसाव को रोकने के लिये पोलीथिन बिछाई जाती है। टांका तैयार होने के पश्चात् 2–3 दिन तक जब पानी साफ हो जाये तब उसमें 3 किलोग्राम सुपरफास्फेट 1/2 किलोग्राम चूना तथा एक पैकेट (250 ग्राम) नील हरित काई मदर कल्चर डालते हैं। जब तापमान 30–45 डिग्री सेंटीग्रेड के बीच हो तब नील हरित काई का उत्पादन किया जावे। यह तापमान फरवरी–मार्च से जून–जुलाई में प्राप्त हो जाता है। सामग्री डालने के 4–5 दिन बाद थोड़ी–थोड़ी काई बनना प्रारंभ हो जाती है। 10–15 दिन पश्चात् पानी के ऊपर नील हरित काई की एक तह निर्मित होती है जिसे अलग कर छाया में सुखाते हैं। यही सूखी हुई काई, नील हरित काई मदर कल्चर कहलाता है। जिसे पुनः नील हरित काई तैयार करने में प्रयोग किया जा सकता है। इस तरह ऊपर तैरती हुई काई को अलग करते जाते हैं और छाया में सुखाकर एकत्रित करते रहते हैं। तद्परान्त टांके का पूरा पानी सूखने के पश्चात् टांके की मिट्टी की 1 इंच मोटी परत निकालकर छाया में सुखाते हैं। सूखी हुई 8–10 किलोग्राम नील हरित काई को 50 किलोग्राम पकी हुई गोबर की खाद में प्रति हैक्टर के हिसाब से धान के खेत में रोपाई के समय छिड़क देते हैं।

(3) **हरी खाद :–**हरी खाद के रूप में सनई, ढेंचा, ग्वार, मूँग, लोबिया, उड़द का प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिये जून के अंतिम सप्ताह में जिन खेतों में धान की रोपाई विधि से करनी हो, उन खेतों में बोनी करें। जब फसल एक से डेढ़ माह की हो जाये, तब उसे पाटा लगाकार खेत में मिला दें। हरी खाद का प्रयोग करने से जीवांश पदार्थ की मात्रा एवं पोषक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि होती है। सनई की हरी खाद से 19 मैट्रिक टन हरा पदार्थ एवं 83 किलोग्राम प्रति हैक्टर नत्रजन भूमि को

प्राप्त होती है। मृदा, हरी खाद की उपस्थिति में भुरभुरी होती है जिससे वायु का संचार नीचे तक होता है। विभिन्न रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप मृदा में जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है तथा मिट्टी की अम्लीयता/क्षारीयता में सुधार होता है।

(4) **सींग खाद :–**

(क) **गाय का सींग खाद :–**गाय के सींग के खोल में दूध देने वाली गाय का ताजा गोबर दबा दबाकर पूरा करें। इसे भूमि में छः माह तक सूर्य के दक्षिणायन के दिनों में शुक्ल पक्ष में शरद ऋतु (सितम्बर–अक्टूबर) में 60 से.मी. गहरा गाड़ें, फिर अवशेषों एवं मृदा तत्व (ह्यूमस) बनाने वाले सूक्ष्म जीवों के एकत्रित होने हेतु छोड़ देते हैं। इस गोबर की विशेषताएँ केंचुआ खाद के समान होती है। खुदाई मार्च अप्रेल (चैत्र नवरात्रि) के कृष्ण पक्ष में सूर्य उत्तरायण हो तब कर लें। 30–35 ग्राम सींग खाद को 13 लीटर पानी में संध्या के समय क्लाक एवं एन्टीक्लाक वाइस मिलाकर बुआई से पूर्व अन्तिम बखरनी के समय जमीन पर छिड़काव करें। इसके प्रयोग से भूमि में नाइट्रेट नत्रजन की मात्रा में अभिवृद्धि 0.06–1.7 प्रतिशत होती है। ह्यूमय बनाने की प्रक्रिया में वृद्धि तथा जड़ों का अच्छा विकास होता है और आक्सीजन के अवशोषण में 75 प्रतिशत वृद्धि होती है।

(ख) **सींग सिलिका :–**गाय के सींग में सिलिका (चकमक पत्थर) 500–600 ग्राम महीन चूर्ण भरकर भूमि में 6 माह तक गाड़कर उपचारित करें। चैत्र नवरात्रि के समय (मार्च–अप्रैल) माह में जब सूर्य उत्तरायण में हो तब पूर्णिमा या शुक्ल पक्ष में दिन के समय जमीन में गाढ़ें और अक्टूबर–नवम्बर माह में जब सूर्य दक्षिणायन में हो तब निकालें। सींग सिलिका चूर्ण का एक ग्राम चूर्ण 13 लीटर पानी में एक घंटे तक घड़ी की दिशा एवं विपरीत दिशा में घुमाकर मिलायें। घोल को स्प्रेयर की मदद से सूर्योदय के समय एक फसल पर दो बार छिड़काव करें। इसके प्रयोग से तने एवं पत्तियों के बढ़वार एवं प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में वृद्धि होती है। प्रकाश संश्लेषण बढ़ने से अच्छी उपज तथा फल एवं अनाज में पोषक तत्वों की गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

शीघ्र तैयार होने वाली जैविक खाद

(1) **अमृत पानी :–**अमृत पानी तैयार करने के लिए एक एकड़ के लिए 10 किलोग्राम गाय का ताजा गोबर, 250 ग्राम नौनी घी, 500 ग्राम शहद और 200 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। सर्व प्रथम 200 लीटर के ड्रम में 10 किलोग्राम गाय का ताजा गोबर डाले उसमें 250 ग्राम नौनी घी एवं 500 ग्राम शहद को डालकर अच्छी तरह मिलायें। इसके पश्चात् ड्रम को पूरा पानी से भर ले और एक लकड़ी की सहायता से घोल को अच्छी तरह मिला दें जब फसल 15 से 20 दिन की हो तब कतार के बीच में 3 से 4 बार प्रयोग करें। इसके प्रयोग के समय मृदा में नमी का होना अतिआवश्यक है। अमृत पानी के प्रयोग के पूर्व 15 किलोग्राम बरगद के पेड़ के नीचे की मिट्टी एक एकड़ में समान रूप से बिखर दें।

(2) **मटका खाद :–**मटका खाद तैयार करने के लिए 15 लीटर ताजा गौ–मूत्र, 15 किलोग्राम गाय का गोबर एवं 15 लीटर पानी को एक बड़े मटकें में भरकर उसमें 1/2 किलोग्राम गुड़ मिलायें तथा इसे 4–5 दिन तक सड़ने दे। इसके पश्चात् इसे 200 लीटर पानी में घोलकर जब फसल 15–20 दिन की हो जावे तब छिड़के। पुनः 7 दिन के अंतर पर 3–4 बार कतारों के बीच प्रयोग करें। प्रयोग करते समय खेत में नमी होना आवश्यक है।

(3) **वर्मी वाश :–**वर्मी वाश तैयार करने के लिये 100 लीटर का ड्रम ले जिसके नीचे टोंटी फिट हो। ड्रम के नीचे वाले भाग में लगभग 6 इंच तक 40 एम.एम. मिट्टी या ईंट के टुकड़े फिर इसके ऊपर 6 इंच तक 20 एम.एम. मिट्टी फिर इसके ऊपर 6 इंच तक बजरी अथवा रेत भरें। इसके ऊपर अधपक्का कचरा डालकर केंचुए छोड़े। ड्रम के मुँह पर एक मटका रखे जिसकी तली में एक छिद्र कर चिंदी लगाये जिससे कि पानी ड्रम में बूंद–बूंद कर गिरता रहे। पानी गिरने के बाद अधपक्का कचरा नम होगा और केंचुए उसे खायेंगे तथा खाद अनायेंगे। वही खाद पानी की बूंदों में घुलकर टोंटी के माध्यम किसी बर्तन में इकट्ठा करें। टोंटी के द्वारा निकला घोल ही बर्मीवाश कहलाता है। जिसे एक भाग बर्मीवाश एवं एक भाग पानी मिलाकर जब फसल 15–20 दिन की हो जाये तब 15 दिन के अंतर पर 3–4 बार छिड़काव करें। इससे फसलों की वृद्धि अच्छी होती है। वर्मीवाश में 10 प्रतिशत गौ–मूत्र मिलाने से और भी प्रभावशाली हो जाता है।

(4) **अग्निहोत्र भस्म :–**अग्निहोत्र मंत्र उच्चारण पर्यावरण की शुद्धि की वैदिक पद्धति है। खेत में, गॉव में, घर में तथा शहर में पर्यावरण में स्वच्छता बनाये रखकर सूर्योदय व सूर्यास्त के समय मिट्टी अथवा तांबे के पात्र में गाय के गोबर के कंडे में अग्नि प्रज्जलित कर अखंड अक्षत (बिना टूटे चावल), चावल के 8–10 दानों को गाय के घी में मिलाकर हाथ के अंगूठे, मध्यम व छोटी अंगूली से अग्निहोत्र मंत्र उच्चारण के साथ स्वाहाः शब्द के साथ आहुति दी जाती है।

अग्निहोत्र मंत्र :–

सूर्योदय के समय– सूर्याय स्वाहा, सूर्याय इदम् न मम्
प्रजापतये स्वाहा, प्रजापतेय इदम न मम्

सूर्यास्त के समय– अग्नेय स्वाहा, अग्नये इदम् न मम्
प्रजापतये स्वाह, प्रजापतये इदम् न मम्

खेतों पर अग्निहोत्र मंत्र, पौधों में कीट–व्याधि निरोधकता के साथ भूमि में उपलब्ध पोषण – जैव कार्बन – ऊर्जा का सक्षम उपयोग कर अधिक उत्पादन हेतु प्रेरित करता है। गोबर खाद, कम्पोस्ट खाद, मऊआ की खली, मूँगफली, विनौले की खली में निम्नानुसार पोषक तत्व एन.पी.के. होता है :–

क्र.	खाद	एन.	पी.	के.
1.	गोबर खाद	0.5	0.25	0.5

2.	कम्पोस्ट खाद	1.0	0.50	3.0
3.	मऊआ खली	2.5	1.0	1.8
4.	मूँगफली खली	7.0	1.5	1.5
5.	विनौले खली	7.5	2.5	1.5

(स) **जैविक कीट एवं व्याधि नियंत्रण :–**

(1) **गौ – मूत्र :**–गौमूत्र कांच की शीशी में भरकर धूप में रख सकते हैं। जितना पुराना गौ–मूत्र होगा उतना अधिक असरकारी होगा। 150 मि.ली. गौ–मूत्र, 15 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रेयर पंप से फसलों में बुआई के 15 दिन बाद, प्रत्येक 10 दिवस में छिड़काव करने से फसलों में रोग एवं कीड़ों में प्रतिरोधी क्षमता विकसित होती है जिससे प्रकोप की संभावना कम रहती है।

(2) **नीम :–**

(क) **नीम पत्ती अर्क का घोल :–**नीम की 10–12 किलो पत्तियॉ, 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगोये। पानी हरा पीला होने पर इसे छानकर एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करने से इल्ली की रोकथाम होती है।

(ख) **नीम की निबोली :–**नीम निबोली 2 किलो को, 10 लीटर पानी में डालकर 4–6 दिन रखें। जब निबोली जम जाये तो बीच–बीच में लकड़ी से हिलाये और छानकर 200 लीटर पानी में मिलाकर फसलों में छिड़काव करें।

नीम की निबोली 2 किलो लेकर महीन पीस ले इसमें 2 लीटर ताजा गौमूत्र मिला लें। इसमें 10 किलो छांछ मिलाकर 4 दिन रखें और 200 लीटर पानी मिलाकर खेतों में फसल पर छिड़काव करें।

(3) **आइपोमिया पत्ती का अर्क :–**आइपोमिया की 10–12 किलो पत्तियों को 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगोंये। पत्तियों का अर्क उतरने पर इसे छानकर एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करें। इससे कीटों का नियंत्रण होता है।

(4) **मट्ठा :–**मिर्ची टमाटर आदि जिन फसलों में चुर्रामुर्रा या कुकड़ा रोग आता है। उसके रोकथाम हेतु एक मटके में छाछ डालकर उसका मुँह पोलीथीन से बांध दे एवं 30–45 दिन तक उसे मिट्टी में गाड़ दें। इसके पश्चात् छिड़काव करने से कीट एवं रोगों से बचत होती है। 100–150 मि.ली. छाछ 15 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें इससे कीट–व्याधि का नियंत्रण होता है।

(5) **मिर्च/लहसुन :–**आधा किलो हरी मिर्च आधा किलो लहसुन पीसकर चटनी बनाकर पानी में घोल बनाये इसे छानकर 100 लीटर पानी में घोलकर फसल पर छिड़काव करें। 100 ग्राम साबुन पाउडर भी मिलावें जिससे पौधों पर घोल चिपक सके। इसके छिड़काव करने से कीटों का नियंत्रण होता है।

(6) **लकड़ी की राख :–**01 किलो राख में 10 मि.ली. मिट्टी का तेल डालकर पाऊडर का भुरकाव 25 किलो प्रति हैक्टर की दर से करने पर एफिडस एवं पंपकिन बीटल का नियंत्रण हो जाता है।

(7) **ट्राईकोडर्मा :–**ट्राईकोडर्मा एक ऐसा जैविक फंफूद नाशक है जो पौधे में मृदा एवं बीज जनित बीमारियों को नियंत्रित करता है। बीजापचार 5–6 ग्राम प्रतिकिलोग्राम बीज की दर से उपयोग किया जाता है। मृदा उपचार में 1 किलोग्राम ट्राईकोडर्मा को 100 किलोग्राम अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर अंतिम बखरनी के समय प्रयोग करें।

कटिंग व जड़ उपचार :–200 ग्राम ट्राईकोडर्मा को 15–20 लीटर पानी में मिलायें और इस घोल में 10 मिनिट तक रोपण करने वाले पौधों की जड़ों एवं कटिंग को उपचारित करें।

03 ग्राम ट्राईकोडर्मा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10–15 दिन के अंतर पर खड़ी फसल पर 3–4 बार छिड़काव करने से वायुजनित रोग का नियंत्रण होता है।

//अन्य नुस्खें//

समेकित कीट प्रबंधन :–

(क) **यौन आकर्षण जाल (सेक्स फेरोमोन ट्रैप) :–**इसका प्रयोग कीट का प्रकोप बढ़ने से पहले चेतावनी के रूप में करते हैं। जब नर कीटों की संख्यॉ प्रति रात्रि प्रति ट्रेप 4–5 तक पहुॅचने लगे तो समझना चाहिए कि अब कीट नियंत्रण जरूरी है। इसमें उपलब्ध रसायन (सेप्टा) की ओर कीट आकर्षित होते हैं। और विशेष रूप से बनी कीट (फनल) में फिसलकर नीचे लगी पॉलीथीन में एकत्र हो जाते हैं।

(ख) **सस्य क्रियाओं द्वारा नियंत्रण :–**

- ❖ गर्मी में खेतों की गहरी जुताई करने से इन कीटों की सुंडी के कोशित मर जाते हैं।
- ❖ फसल की समय से बुआई करनी चाहिए।

अंतर्वर्ती फसल :–चना फसल के साथ धनियॉ/सरसों एवं अलसी को हर 10 कतार चने के बाद 1–2 कतार लगाने से चने की इल्ली का प्रकोप कम होता है तथा ये फसलें मित्र कीड़ों को आकर्षित करती है।

प्रपंची फसल :–चना फसल के चारों ओर पीला गेन्दा फूल लगाने से चने की इल्ली का प्रकोप कम किया जा सकता है। पौढ़ मादा कीट पहले गेन्दा फूल पर अण्डा देती है। अतः तोड़ने योग्य फूलों को समय–समय पर तोड़कर उपयोग करने से अण्डे एवं इल्लियों की संख्यॉ कम करने में मदद मिलती है।

जैविक नियंत्रण :–

(1) न्यूक्लियर पोलीहैड्रोसिस विषाणु–(NPV) आर्थिक हानि स्तर की अवस्था में पहुॅचने पर सबसे पहले जैविक कीटनाशी, एच.एन.पी.वी. को 250 मि.ली. प्रति है. के हिसाब से 500 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

- ❖ जैविक कीटनाशी (NPV) में विषाणु के कण होते हैं, जो सुंडियों में विषाणु की बीमारी फैला देते हैं, जिससे वे पीली पड़ जाती है तथा फूलकर मर जाती है।

❖ रोगग्रसित व मरी हुई सुंडियॉ पत्तियों व टहनियों पर लटकी हुई नजर आती हैं।

(2) **कीटभक्षी चिड़ियों को संरक्षण :–**फलीभेदक एवं कटुआ कीट के नियंत्रण में कीटभक्षी चिड़ियों का महत्वपूर्ण योगदान है। साधारणतः यह पाया जाता है कि कीटभक्षी चिड़ियॉ 35 प्रतिशत तक चना फलीभेदक की सूंडी को नियंत्रित कर लेती है।

जैविक नियंत्रण :–

❖ परजीवी कीड़ों को बढ़ावा देने के लिये अधिक पराग वाली फसल जैसे धनिया आदि को खेत के चारों ओर लगाना चाहिए।

❖ कीटभक्षी चिड़ियों को आकर्षित एवं उत्साहित करने के लिये उनके बैठने के लिये स्थान बनाने चाहिए सुंडियों को आक्रमण होने से पहले यदि खेत में जगह–जगह पर तीन फुट लंबी डंडियॉ टी एन्टीना (टी आकार में) लगा दी जाये तो इन पर पक्षी बैठेंगे जो सुंडियों को खा जाते हैं। इन डंडियों को फसल पकने से पहले हटा दें जिससे पक्षी फसल के दानों को नुकसान न पहुॅचाये।

इल्ली नियंत्रण :–

❖ परजीवी कीड़ों को बढ़ावा देने के लिये अधिक पराग वाली फसल जैसे धनिया आदि को खेत के चारों ओर लगाना चाहिए।

❖ कीटभक्षी चिड़ियों को आकर्षित एवं उत्साहित करने के लिये उनके बैठने के लिये स्थान बनाने चाहिए सुंडियों को आक्रमण होने से पहले यदि खेत में जगह–जगह पर तीन फुट लंबी डंडियॉ टी एन्टीना (टी आकार में) लगा दी जाये तो इन पर पक्षी बैठेंगे जो सुंडियों को खा जाते हैं। इन डंडियों को फसल पकने से पहले हटा दें जिससे पक्षी फसल के दानों को नुकसान न पहुॅचायें।

इल्ली नियंत्रण के तरीके :–

(1) 5 लीटर देशी गाय के मट्ठे में 5 किलो नीम के पत्ते डालकर 10 दिन तक सड़ायें, बाद में नीम की पत्तियों को निचोड़ लें। इस नीमयुक्त मिश्रण को छानकर 150 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ के मान से समान रूप से फसल पर छिड़काव करें। इससे इल्ली व माहू का प्रभावी नियंत्रण होता है।

(2) 5 लीटर मट्ठे में 1 किलो नीम के पत्ते व 1 किलो धतूरे के पत्ते डालकर 10 दिन सड़ने दे। इसके बाद मिश्रण को छानकर इल्लियों का नियंत्रण करें।

(3) 5 किलो नीम के पत्ते 3 लीटर पानी में डालकर उबाल लें। जब आधा रह जावे तब उसे छानकर 150 लीटर पानी में घोल तैयार करें। इस मिश्रण में 2 लीटर गौ–मूत्र मिलावें। जब यह मिश्रण एक एकड़ के मान से फसल पर छिड़के।

(4) 1/2 किलो हरी मिर्च व 1/2 किलो लहसुन पीसकर 150 लीटर पानी में डालकर छान ले तथा एक एकड़ के लिए इस घोल का छिड़काव करें।

(5) टिन की बनी चकरी खेतों में लगाने से भी इल्लियॉ गिर जाती हैं।

दीमक नियंत्रण :–

(1) मक्का के भुट्टे से दाना निकालने के बाद जो गिण्डीयॉ बचती है उन्हें एक मिट्टी के घड़े में इकट्ठा कर लें। इस घड़े को खेत में इस प्रकार गाड़े कि घड़े का

मुँह जमीन से कुछ बाहर निकला हो। घड़े के ऊपर कपड़ा बांध दे तथा उसमें पानी भर दें। कुछ दिनों में ही आप देखेंगे कि घड़े में दीमक भर गई है। इसके उपरांत घड़े को बाहर निकालकर गरम कर ले ताकि दीमक समाप्त हो जावे।

इस प्रकार के घड़े को खेत में 100–200 लीटर की दूरी पर गड़ाएँ तथा करीब 5 बार गिण्डकीयॉ बदलकर यह क्रिया दोहराएँ। खेत दीमक समाप्त हो जावेंगी।

(2) सुपारी के आकार की हींग एक कपड़े में लपेटकर तथा पत्थर में बांधकर खेत की ओर बहने वाली पानी की नाली में रख दें उससे दीमक तथा उगरा (विल्ट) रोग नष्ट हो जावेगा।

उगरा नियंत्रण (विल्ट) :–

(1) एक लीटर मट्ठे में चने के आकार के 3 हींग के टुकड़े मिलाकर उससे चने का बीजोपचार करें। तत्पश्चात् बोनी करें। सोयाबीन, उड़द, मूँग एवं मसूर के बीजों को अधिक गीला न करें।

(2) 400 मि.ली. नीम के तेल में 100 ग्राम कपड़े धोने वाला पाउडर डालकर खूब फेंटे, फिर इस मिश्रण में 150 लीटर पानी डालकर घोल बनावें। यह एक एकड़ के लिए पर्याप्त है।

चूहा नियंत्रण :–

5 किलो बेशरम के पत्ते और धतुरे के 3 फल फोड़कर 5 लीटर पानी में मिलावें तथा उसे उबाले। जब पानी 2 लीटर के करीब रह जाये तब इस मिश्रण को छान कलें। बचे हुए पत्ते को जमीन में गाड़ दे क्योंकि ये अत्यंत जहरीले होते हैं। अब इस घोल में 1 किलो चने डालकर उबाले तथा ठंडा होने के बाद चने को चूहे के बिल के आस–पास डाल दें।

अनाज भंडारण :–

(1) आधा किलो प्याज एक बोरी अनाज में रखने से घुन नहीं लगती है।

(2) दो लहसुन की पौथी 5 किलो चावल की दर से रखने पर धुन चींटी और तिल चट्टे से बचाव होता है।

(3) जंगली तुलसी (पांचालिी), नीलगिरी, नीम, बेशरम तथा गेंदे की पत्तियों को सम भाग में लेकर पीस लें तथा बिस्कुट के बराबर टिकिया बनाकर छाया में सुखा लें मच्छर वाले स्थान पर टिकियों का धुंआ कर दें।

चूरड़ा–मुरड़ा का नियंत्रण :–

5 लीटर छांछ को तांबे या अन्य बर्तन में या प्लास्टिक जार में भरकर भूसे के अंदर 8–10 दिनों तक गाड़कर रखे बाद में उसे 100 लीटर पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें। टमाटर तथा मिर्च चुरड़ा–मुरड़ा कुकड़ा का नियंत्रण होता है।

फांस का नियंत्रण :–पलास के पत्तों को कांस पर बिछाने से कांस नष्ट हो जाती है।

//अन्य फसल में कीट नियंत्रण//

(1) **रस चूसक कीट नियंत्रण :–**

फसल की 30 से 35 दिन की अवस्था में हरा माहों, थ्रिप्स आदि के नियंत्रण के लिए 25–30 किलो निबोली पूर्ण, 500 ग्राम तम्बाखू एवं 15 लीटर गौ–मूत्र में 48 घंटे गलाने के पश्चात् छानकर प्रति हेक्टर छिड़काव करें।

(2) **सेमीलूपर एवं पत्ती काटने वाले कीड़े :–**

फसल की 45–60 दिन की अवस्था पर 10 किलो अकाव के पत्ते, 10 किलो बेशरम के पत्ते एवं 10 किलो नीम के पत्तों को 15 लीटर गौ–मूत्र में मिलाकर 48 घंटे पश्चात् मसलकर छानकर पानी मिलाकर छिड़काव करने से सेमीलूपर एवं पत्ती काटने वाले कीट नियंत्रण किए जा सकते हैं।

लहसुन में कीट नियंत्रण :–

नीम की पत्ती 3 किलोग्राम, तम्बाखू 250 ग्राम तथा बेशरम की पत्ती 500 ग्राम पानी में मिलाकर कुछ दिन रखें। अच्छी तरह सड़ने और छानने के बाद 200 ग्राम घोल को 15 लीटर पानी के मान से मिलाकर फसल पर छिड़काव करें।

चने की फसल में कीट नियंत्रण :–

(1) खेतों में जगह–जगह पर लकड़ी की टी लगाकर रखें, ताकि उस टी पर चिड़िया बैठकर इल्लियों का प्राकृतिक नियंत्रण कर सकें।

(2) चने के साथ सरसों व सूरजमुखी की अंतरवर्तीय फसल 6:2 के अनुपात में बोने से भी चेने का प्राकृतिक कीट नियंत्रण होता है क्योंकि चिड़ियाएँ सरसों और सूरजमुखी की डालियों पर आसानी से बैठती है और चने पर लगने वाली इल्लियों को नियंत्रित करती है। पक्षियों को आकर्षित करने के लिए खाली खेत में जगह–जगह मुट्ठी भर ज्वार बिखेर दें।

मिट्टी को रोग एवं खरपतवार रहित करने के कारगर उपाय

मृदा सूर्यीकरण :–

गत कई दशकों से उत्पादन वृद्धि हेतु रसायनों जैसे उर्वरकों, कीटनाशक एवं खरपतवार नाशी दवाओं का प्रयोग बढ़ रहा है जो कि मानक स्वास्थ्य व पर्यावरण दोनों के लिए अत्यन्त हानिकारक है। इसी वजह से वर्तमान में प्राकृतिक एवं कार्बनिक खेती पर ज्यादा बल दिया जा रहा है। ऐसे में खरपतवार तथा मिट्टी में पाये जाने वाले अन्य हानिकारक सूक्ष्म जीवों के नियंत्रण के लिए मृदा सूर्यीकरण तकनीक कारगर साबित होगी।

मृदा सूर्यीकरण तकनीक में पारदर्शी पॉलीथीन (प्लास्टिक मल्चिंग) से वर्ष के अधिक तापमान वाले महीनों (मई–जून) में सिंचाई उपरान्त खाली पड़े खेत को ढक देते हैं, और पालीथीन के किनारों को मिट्टी से अच्छी तरह दबा देते हैं, ताकि मृदा में अवशोषित एवं संचित तापर बाहर न निकल सकें। जिसके फलस्वरूप खेत की सतह

पर तापमान में लगभग 8–12''सेंटीग्रेड की वृद्धि हो जाती है। जो कि मृदा में पाये जाने वाले हानिकारक सूक्ष्म जीवाणुओं एवं खरपतवारों के बीजों को नष्ट करता है।

मृदा सूर्यीकरण तकनीक से विभिन्न मृदाओं के तापमान में वृद्धि का अवलोकन सारणी म में दिये गये ऑकड़ों से किया जा सकता है। इन ऑकड़ों से सात विदित होता है कि सतह पर सामान्य दशा की तुलना में सूर्यीकृत दशा में मृदा तापमान लगभग 8–10'' सेंटीग्रेड अधिक होता है जो कि विभिन्न प्रकार के खरपतवारों व मृदा जनित सूक्ष्म जीवाणुओं, परजीवियों एवं सूत्रकृमि के विनाश के लिए काफी होता है साथ ही साथ इसका भी पता चलता है कि काली मिट्टी हल्के हरे रंग की तुलना में सौर ऊष्मा ज्यादा अवशोषित करती है।

सारिणी–1 मृदा तापमान (डिग्री सेन्टीग्रेड) पर सूर्यीकरण तकनीक का प्रभाव

दशा	मृदा गहराई (से.मी.)					
	0.0		7.5		10.0	
	भारी मृदा (काली)	हल्की मृदा (दौमट)	भारी मृदा (काली)	हल्की मृदा (दौमट)	भारी मृदा (काली)	हल्की मृदा (दौमट)
सामान्य दशा	49	47	43	41	39	37
सूर्यीकृत दशा	58	56	49	45	43	42

मृदा सूर्यीकरण द्वारा प्रभावी नियंत्रण हेतु निम्नलिखित कारकों पर ध्यान देना आवश्यक है :–

(1) सौर ऊर्जा का अवशोषण एवं संचयन अधिक हो सके इसके लिए पतली (0.05 मि.मी. या 20–25 माइक्रो मीटर) एवं पारदर्शी पॉलीथीन सीट, जो कि मोटा एवं काली पॉलीथीन सीट की तुलना में अधिक प्रभावशाली होती है, का प्रयोग करना चाहिए।

(2) सौर ऊष्मा के अधिकतम शोषण तथा मृदा के तापमान में अधिकतम वृद्धि के लिए पॉलीथीन को इस तरह से बिछाना चाहिए, कि जमीन से बिल्कुल चिपकी रहे एवं उसके नीचे कम से कम हवा रहे। जिससे सौर ऊष्मा का अधिक शोषण एवं मृदा के तापमान में अधिक वृद्धि हो सके। इसके लिए खेतों को अच्छी तरह से समतल करना आवश्यक है।

(3) मृदा में नमी की मात्रा इस तकनीक की सफलता का एक मुख्य कारक है इसलिए पॉलीथीन बिछाने से पहले खेत की हल्की सिंचाई (50 मि.मी.) कर देना अति आवश्यक है। इससे मृदा में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवाणु पर सौर ऊष्मा का प्रभाव बढ़ जाता है तथा साथ ही साथ ऊष्मा का संचालन अधिक गहराई तक होता है।

(4) तीव्र गर्मी वाले महिनों में (मई से जून) जब खेत में कोई फसल नहीं हो, सूर्यीकरण करना तथा अधिक से अधिक समय तक पॉलीथीन बिछाकर रखने से इस तकनीक की सफलता में वृद्धि होती है। साधारणतः 4–6 सप्ताह तक यह विधि करने पर बहुतांश खरपतवार नष्ट हो जाते हैं।

(5) मृदा सूर्यीकरण का प्रभाव मुख्यतः भूमि के ऊपरी सतह (0–10) तक रहता है। इसके प्रभाव को ज्यादा गहराई तक पहुॅचाने के लिए सूर्यीकरण की अवधि 8–10 सप्ताह का होना चाहिए। जिससे कन्द व गांठों से उगने वाले खरपतवार भी नष्ट हो जाये।

(6) मृदा सूर्यीकरण के उपरान्त खेत में जुताई कार्य वर्जित हैं अन्यथा इसका असर कम हो जाता है अतः बुवाई के लिये डिबलर या तो अन्य यन्त्र जो केवल कूंड बनाने का कार्य करें, जैसे सीड ड्रिल आदि का ही प्रयोग करना चाहिए। जिससे मृदा की सतह में कोई अव्यवस्था न हो। अतः इस तकनीक का पूर्ण लाभ लेने के लिए किसान भाइयों को इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इस तकनीक का असर 2–3 फसलों तक रहता है।

(7) साधारणतः 4–6 सप्ताह के मृदा सूर्यीकरण से बहुतायत खरपतवारों का पूर्ण नियंत्रण हो जाता है कुछ खरपतवार जैसे नागर, मोथा, दूब घास या कांस जिनका प्रजनन कंद या तने के गांठों से होता है पर मृदा सूर्यीकरण का कम प्रभाव पड़ता हैं क्योंकि जमीन के अन्दर कंद या गांठे प्रायः अधिक गहराइयों में होती है साथ ही साथ कुछ खरपतवार जैसे सेंजी (मिलीलोटस इंडिका या अल्वा), हिरन खुरी (केनवासवुलस अरवेन्सिन) जिसके बीज का आवरण काफी सख्त होता है पर भी सूर्यीकरण का प्रभाव कम पड़ता है।

कठिनाईयॉ एवं सीमायें :–

वैसे तो मृदा सूर्यीकरण तकनीक काफी जॉची परखी तकनीक है तथा किसानों के लिए अत्यन्त उपयोगी एवं लाभकारी है। फिर भी इस तकनीक की निम्नलिखित सीमायें हैं :–

(1) पालीथीन सीट की लागत अधिक होने से यह तकनीक काफी खर्चीली है। फिर भी इस तकनीक का प्रयोग नगदी फसलों या ऊॅची कीमत वाली फसलों, पृष्पोत्पादन और विभिन्न नर्सरियों में करने पर आर्थिक दृष्टि से काफी लाभदायक होगा। पतली पॉलीथीन (50 माइक्रोमीटर या कम) जो कि ज्यादा प्रभावशाली है और दोबारा दूसरे खेत में प्रयोग करने से भी अधिक लागत में कमी आयेगी। इस तकनीक की आर्थिक लागत यदि भूमि की तैयारी पर की गई खर्च की बचत, प्रतिवर्ष शाकनाशी, सूत्रकृमिनाशी एवं कवकनाशी रसायनों पर आने वाले खर्च में बचत, फसलों को हानि पहुॅचाने वाले विभिन्न कारकों का नियंत्रण, भूमि में पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि 2 से 3 फसलों तक प्रभावी असर एवं उत्पादन में वृद्धि इत्यादि को ध्यान में रखकर गणना की जाये तो यह तकनीक काफी सस्तीर एवं लाभकारी होगी।

(2) इस तकनीक का उपयोग केवल उन्हीं क्षेत्रों में संभव है, जहॉ पर कम से कम 6 से 8 हफ्तों तक आसमान साफ एवं वातावरण का तापमान 40 ''सेन्टीग्रेड से अधिक रहता हो।

(3) निचली भूमि जहॉ पर वर्षा ऋतु में भराव हो वहॉ पर यह तकनीक कारगार सिद्ध नहीं होगी।

//सारणी–2 मृदा सूर्यीकरण का खरपतवारों की संख्यॉ पर प्रभाव//

प्रमुख खरपतवार	सूर्यीकृत रहित	सूर्यीकृत	प्रतिशत
पथरचट्टा (ट्राइएन्थिमा पारचुलाकेस्ट्रम	173	3	98
लहसुआ (डाइजेरा अरबेन्सिस)	125	3	98
मकड़ा (डैक्टीलोक्टेनियम	139	21	85

इजिप्शियम			
कनकौआ (कोमेलिना बैधलेन्सिस	14	0	100
जंगली जई (चिनोपोडियम एल्बम)	9	0	100
बथुआ (चिनोपोडियम एल्बम)	30	0	100
गुल्लीबण्डा (फेलेरिस माइनर)	41	0	100
गाजर घास (पारथेनियम हिस्टीफोरस)	3	0	100
दूधी (यूफोरबिया जेनीकुलाटा)	15	0	100

– मृदा सूर्यीकरण के उपरांत खेती की तैयारी मुख्यतः, जुताई पर आने वाला खर्च समाप्त हो जाता है

– पर्यावरण मित्र

जैविक खाद्यान्न आवश्यक क्यों ?

(1) जैविक खाद्यान्न खाने में स्वादिष्ट एवं पोषक तत्वों से भरपूर है क्योंकि जैविक खाद्यान्नों में विटामिन एवं खनिज आदि की प्रचुर मात्रा होती है जिसका विवरण निम्नानुसार है :–

मिनिरल मिलीएक्यूवलेंटस प्रति 100 ग्राम			
क्र.	पोषक तत्व	जैविक पद्धिति से उत्पादित खाद्यान्न	रासायनिक पद्धिति से उत्पादित खाद्यान्न
1.	कैल्शियम	23	4.4
2.	मैग्नेशियम	59.2	4.5
3.	पोटेशियम	148.3	5.86
4.	सोडियम	6.5	0
5.	मेग्नीज	68	1
6.	आयरन	1938	9
7.	कॉपर	53	0

(2) रासायनिक उर्वरकों का उपयोग भूमि में नाईट्रेटस की अधिकता का संग्रहण कर मानवीय स्वास्थ्य विशेष कर शिशुओं की सेहत पर दुष्प्रभाव डालता है।

(3) जैविक खाद्यान्न के उपयोग से हम आने वाली पीढ़ी को गम्भीर बीमारियों से बचा सकते हैं क्योंकि जैविक खाद्यान्न हमें रसायनों से मुक्त भोजन के साथ साथ संतुलित पर्यावरण व उपयोगी जीवों हेतु सहायक है।

(4) भारत के महानगरों में उपभोक्ता जैविक खेती से पैदा हुई सब्जियों, फलों और अन्य उत्पादों का मूल्य बाजार मूल्य से अधिक देने की पेशकश करते हैं जो **''जैविक उत्पाद की महत्ता''** को दर्शाता है।

(5) जैविक खाद्यान्न की खेती भूमि की उर्वरकता बढ़ाने व अन्य जीवों को संरक्षित करने के साथ साथ सुरक्षित भोजन व स्वच्छ वातावरण की दिशा में एक कदम है।

(6) **''बीज निगम के जैविक उत्पाद''** म0प्र0राज्य जैविक प्रमाणीकरण संस्था भोपाल से अभिप्रमाणित है।

निगम द्वारा बुरहानपुर व खमरिया (जबलपुर) प्रक्षेत्रों पर **''विशुद्ध जैविक उत्पादन''** प्रारंभ कर चना, मटर, गेहूँ आदि जैविक खाद्यान्नों का विक्रय किया जा रहा है।

जैविक खेती का आधार

1– गौ उत्पाद (गौमूत्र, गोबर, दूध, दही एवं घी)।
2– नीम उत्पाद (नीम पत्ती, नीम निंबोली, नीम खली एवं नीम तेल), करंज, अकाउ, बेथरम, धतूरा, सीताफल।
3– केंचुआ
4– बायोगैस
5– जीवांश
6– मित्र कीटों का संरक्षण
7– हरी खाद
8– फसल चक्र
9– जैव उर्वरकों का उपयोग।
10– वनस्पतियों का समुचित उपयोग।

जैविक खाद एवं जैविक कीट नियंत्रण

अ– जैविक खाद

1– गोबर खाद/गोबर कम्पोस्ट/गोबर सुपर कम्पोस्ट
1– वर्मी कम्पोस्ट
2– बायोगैस स्लेरी
3– नाडेप कम्पोस्ट/नाडेप फास्फो कम्पोस्ट
4– हरी खाद
5– अमृत पानी

6– अमृत संजीवनी
7– मटका खाद
8– सींग खाद
9– सींग सिलीका
10– नील हरित काई/अजोला
11– जैव उर्वरक (एजोटोवेक्टर, पी.एस.बी., रायजोवियम)

ब– जैविक कीट नियंत्रण :– इसके अंतर्गत कई विधियॉ हैं :–

अ– सस्य कियाओं द्वारा कीट–व्याधि नियंत्रण

1– ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई
2– फसल चक्र
3– जैविक बीज का चुनाव
4– बीजोपचार
5– सही समय तथा पंक्तियों में बुवाई
6– अंतरवर्ती फसल पद्धति
7– पोषक तत्व प्रबंधन
8– जल प्रबंधन

ब– यांत्रिकी विधियों से कीट नियंत्रण

1– चिपचिपा बोर्ड
2– प्रकाश प्रपंच (लाइट ट्रेप)
3– फेरोमेन ट्रेप
4– खेत में टी आकार की खूटिया गाड़ना।
5– खेत की मिट्टी घोल से माहू नियंत्रण।

स– वनस्पतिक उत्पादों द्वारा कीट व्याधि नियंत्रण

1– नीम उत्पाद (नीम तेल, खली, छाल, पत्ती, फल) इनका उपयोग कीट नियंत्रण रोग नियंत्रण, विषाणुनाशक के रूप में किया जाता है।
2– लहसुन मिर्च काढ़ा
3– तम्बाकू का काढ़ा
4– करंज की खली
5– आइपामिया पत्ती, घोल का छिड़काव
6– धतूरा, सीताफल, अकाउ के पत्तो के घोल का छिड़काव
7– 1 किलो राख में 10 मिली. मिट्टी तेल मिलाकर भुरकाव

द– जैविक विधियों द्वारा कीट नियंत्रण

1– ट्राइकोडर्मा विरडी, ट्राइकोडर्मा हरजाइनम, बेसिलस सरटीलियस, सूडोमोनास प्रजाति, ग्लोमस प्रजाति जैव नियंत्रकों के रूप में बीज व मृदा जनित रोगों के

नियंत्रण में उपयोगी। बीजोपचार हेतु 4–5 ग्राम प्रति किलो बीज तथा भूमि उपचार हेतु 1 किलो मात्रा प्रति एकड़ भुरकाव।

2– एन पी व्ही

3– ट्राइको ग्रामा परजीवी मित्र कीट जो हानिकारक कीड़ों के अंडों के ऊपर अपने अंडे देता है।

4– वेसीलस थुरेजेंन्सिस जीवाणुवीय प्रकृति का जैव कीटनाशी है जो लेप्डिोप्टेरा, डिप्टेरा व कोलियोप्टेरा वर्ग के कीटों को नियंत्रण करता है।

5– क्राइसोपा कार्निया :– माहू, सफेद मक्खी, मिलीवग, हरा तेला को नियंत्रित करता है।

6– एपीकार्निया :– यह गन्ने के पाइरिल्ला कीट का नियंत्रण करता है।

7– असेसिन बगः– ये परभक्षी कीट तम्बाकू व चना की इल्ली, हरा सेमी लूपर पर आक्रमण कर उन्हें नष्ट करता है। इनके अलावा ड्रेगन फ्लाई, बीर बहूटी, किंथोरीमक्खी, होवर फ्लाई, लेस बिंग, लेडीवर्ड वीटल, तंतइया मिरिड बग, इन्द्र गो भ्रंग इत्यादि प्रकृति में पाये जाते हैं व स्वतः ही हानिकारक कीटों को नियंत्रित करते हैं।

8– गाय भैंस का मट्ठा।

9– गौ–मूत्र।

मित्र कीट एवं उनके कार्य :–

अ– <u>प्रत्यक्ष रूप से लाभदायक कीट</u>

1– मधुमक्खी– परागण एवं शहद निर्माण।

2– रेशम कीट– रेशम निर्माण।

3– लाख कीट– लाख निर्माण।

4– गुबरेला कीट– मनुष्य के मूत्र जनन संबंधी रोगों का उपचार।

5– तीतर, बतक, मुर्गी, छिपकली– हानिकारक कीटों का भक्षण।

6– मैना, गलगल, नीलकंठ, चिड़िया एवं कउआ– हानिकारक कीटों का भक्षण।

ब– <u>अप्रत्यक्ष रूप से लाभदायक कीट –</u>

1– चींटियॉ, मधुमक्खियॉ, भॅवरा, तितलियॉ– परागण की क्रियाओं में सहयोग।

2– ड्रेगन फ्लाई कीट– हानिकारक कीटों का भक्षण।

3– लेडीबर्डवीटल – माहों कीट का भक्षण।

4– भूंग– इल्लियों का भक्षण।

5– सिरफीड फ्लाई– माहों कीट का भक्षण।

6– टेकनिड फ्लाई– हानिकारक कीटों का भक्षण।

// जैविक खाद एवं रासायनिक खाद में अंतर //

क्र. स.	जैविक खाद	रासायनिक खाद
1.	जैविक खाद कृषि भूमि एवं फसलों का संतुलित भोजन है।	जबकि रासायनिक खाद जहरीले रसायन है।

2.	जैविक खाद दिनों दिन भूमि की उर्वरकता को बढ़ाता है। अगली पीढ़ी के लिए भूमि सुरक्षित होती है।	रासायनिक खाद से धीरे–धीरे भूमि बंजर होने लगती है, जिससे भावी संतान की रोजी–रोटी मारी जाती है।
3.	जैविक खाद से भूमि को उर्वरा बनाने वाले जीवाणुओं की संख्या बढ़ती है। भूमि के तापक्रम आद्रता में संतुलन बना रहता है। कृषि भूमि मुलायम–भुरभुरी बनती है।	जबकि रासायनिक खाद कृषि मित्र जीवाणुओं ही हत्या करते हैं। भूमि को कठिन कड़ी बनाते हैं। उसमें क्षार या अम्ल दोष बढ़ता है।
4.	जैविक खाद से कम बारिश हुई तो भी आर्द्रता बनी रहती है। अधिक बारिश हुई तो अतिरिक्त पानी की निकासी करने में सहायक होता है।	रासायनिक खाद डालने पर कम बारिश हुई तो फसल सूख जाती है और अधिक बारिश हुई तो पानी में घुलकर वह बह जाती है। रासायनिक खाद पर उगाई गई फसल को पानी की अधिक मात्रा लगती है।
5.	जैविक खाद से भूमि चलनी जैसी सछिद्र बनकर मिट्टी छोटे–छोटे कणों में बांध जाती है जिससे हवा से उड़ जाने को या पानी में बह जाने को रोकती है।	जबकि यह गुण रासायनिक खाद में नहीं है।
6.	जैविक खाद लगातार तीन फसलों के लिए काम आती है।	रासायनिक खाद केवल एक फसल तक सीमित रहती है।
7.	जैविक खाद हम अपने ही गॉव में अपने ही खेत पर खेती की वस्तुओं से और अपने पशुओं के गोबर गोमूत्र से बना सकते हैं।	रासायनिक खाद बाहर से आने से हम परावलम्बी बनते हैं। पैसा किसान के घर से बाहर चले जाने से गॉव गरीब और किसान बेकार बनते हैं।
8.	लगातार जैविक खाद इस्तेमाल करने पर फसलों में बीमारियॉ कम आती है और बीमारियॉ बनोषधियों से हटाई जा सकती है।	जबकि रासायनिक खाद बीमारियों को बढ़ाता है और खर्चीली रासायनिक दवाओं के कारण किसान की कमर टूट जाती है।
9.	जैविक खाद बनाने से सफाई होकर गॉव–शहर स्वच्छ सुन्दर दिखते हैं। साथ–साथ बीमारियों पर अंकुश लगता है।	रासायनिक खाद से उत्पन्न बीमारियों को हटाने के लिए जहरीली रासायनिक दवाऍ खरीदनी पड़ती है जिससे भूमि हवा–जल–अनाज प्रदूषित होकर तरह–तरह की बीमारियॉ बढ़ जाती है।
10.	जैविक खाद से उत्पन्न अनाज, साग, सब्जी, फल आदि मधुर, पुष्टिकर, काफी समय तक ताजगी भरे रहते हैं। उनका संग्रह अकाल में काम आता है।	रासायनिक खाद के उत्पादन बेस्वाद, रोगोत्पादक और तुरंत सड़ने लगते हैं। इससे अकाल की भीषणता बढ़ती है।
11.	जैविक खाद गोबर–खरपतवार से बनती है, किसान को हर दिन, हर साल निरंतर यह सब अपने ही खेत और पशु से प्राप्त होता है। यह अखूट निरंतर बहने वाला झरना है।	रासायनिक खाद जिन खनिजों से प्राप्त की जाती है उन खनिजों के जल्द ही समाप्त होने का इशारा वैज्ञानिकों ने कर दिया है। मतलब रासायनिक खाद खनिज समाप्ति के बाद स्वयं समाप्त हो जायेंगे
12.	पर्यावरण के साथ जैविक खाद का सामंजस्य है।	रासायनिक खाद पर्यावरण का संतुलन बिगाड़ते हैं। रासायनिक खाद कारखाने भी प्रदुषण बढ़ाते हैं।

13.	देहात का आम आदमी, महिला–पुरूष, बच्चे–बूढ़े–अनपढ़ कोई भी जैविक खाद बना सकते हैं। इतना सरल है।	रासायनिक खाद बनाने के लिए करोड़ों रूपये की पूँजी, बड़े–बड़े भारी–भरकम संयंत्रों की जरूरत होती है। तज्ञ लोग चाहिये। यह बड़ा जटिल मामला है।
14.	जैविक खाद की ढुलाई अपने ही बैल और बेलगाड़ी द्वारा किसान आसानी से कम सकते हैं।	रासायनिक खाद की ढुलाई के लिए जहाजरानी, रेल आदि इस्तेमाल होते हैं। भारत में यातायात के पर्याप्त साधन नहीं है। उन पर अतिरिक्त बोझा ढुलाई का पड़ता है। इन साधनों का इस्तेमाल करने से हवा में प्रदुषण बढ़ता है। पेट्रोल–डीजल भारत में आयात किया जाता है। इससे परकीय चलन कर्जा उठाकर लेना होता है। ब्याज तो चढ़ता ही है, जनहित विरोधी शर्तें विश्व बैंक एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं की हम पर लाद दी जाती है।
15.	जैविक खाद हमें स्वावलंबी बनाता है।	रासायनिक खाद से व्यापारी–उद्योगपति, साहूकार, सरकार आदि पर निर्भरता बढ़ती है। रासायनिक खाद सस्ता दिखाने के लिए इसके उत्पादक कारखानों को 13 हजार करोड़ रूपये की सब्सिडी सरकार दे रही है। यानी भारत के हर नागरिक को हर साल 130 रूपये का बोझ टेक्स के रूप में भरना पड़ता है।
16.	गॉव की ओर से काम के लिए शहर में हो रहा पलायन थमेगा और नई नारकीय झुग्गी झोंपडियॉ नहीं बनेगी। शहर में बसे देहात के निवासी अपने गॉव लौटने लगेंगे। बदसूरत बनते जा रहे शहरों की सुरक्षा, स्थिति सुधरेगी। इसलिए कम्पोस्ट खाद हमारे लिए मांगल्य लाने वाला मांगल्य दूत है।	जबकि रासायनिक खाद सर्वविनाशकारी है, सब तरह से बर्बाद करने वाली और मृत्यु की ओर ले जाने वाला कुमार्ग।

जैविक खेती में जैव उर्वरकों का महत्व

आजकल पोषक तत्वों के विविध स्रोतों से बर्मी कम्पोस्ट गोबर की खाद, जैव उर्वरक आदि के समान्वित उपयोग पर बल दिया जा रहा है। वैसे जो विभिन्न स्रोतों का पोषक तत्व पूर्ति में अपना विशेष महत्व है। आवश्यक पोषक तत्वों की निरन्तर भूमि में हो रही कमी को दूर करने हेतु तथा उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिये जैव उर्वरक एक अच्छी भूमिक अदा कर सकते हैं।

भूमि एक जीवित क्रियाशील तंत्र है इसमें सूक्ष्म जीवों बैक्टीरिया, फॅफूदी, शैवाल एवं प्रोटोजोआ आदि पाये जाते हैं। ये पौधों के साथ वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को जिन्हें पौधे सीधे उपयोग करने में अक्षम होते हैं जैसे अमोनिया, नाइट्रेट तथा फास्फोरस आदि सहजीवी या असहजीवी रूप में रहते हैं को उपलब्ध अवस्था में बदल देते हैं। जैव

उर्वरक एक ऐसा उर्वरक है जिसमें सूक्ष्म जीव जीवित, सुषुमा अवस्था में कोयले के चूर्ण, चारकोल, लिनाइट मिट्टी या रासायनिक पोषक तत्व के माध्यम से विद्यमान रहते हैं। जो पौधे के लिये नत्रजन एवं फास्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाते हैं। ऐसा देखा गया है कि भूमि में प्रयोग किये गये नाइट्रोजन की मात्र 40–50 प्रतिशत ही फसल उपयोग कर पाती है तथा फास्फोरस फसल को मात्र एक तिहाई ही प्राप्त होता है। ऐसी परिस्थिति में रस्ते एवं कम लागत वाले जैव उर्वरकों जैसे एजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिलत, नील हरित शैवाल एवं फास्फेट घोलकर जीवाणु इत्यादि के उपयोग में पर्यावरण को बिना हानि पहुॅचाये अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलावा जैव उर्वरक पौधों के लिए वृद्धिकारक पदार्थ भी देते हैं, पादप रोगों की रोकथाम करते हैं तथा पर्यावरण को स्वच्छ रखते हैं। ये भूमि, जल एवं वायु को बिना प्रदूषित किये उत्पादन स्तर में स्थायित्व प्रदान करते हैं।

वर्तमान में सब्जियों के महत्व को देखते हुए इसके उत्पादन एवं उनकी गुणवत्ता पर ध्यान दिया जाना चाहिए। जीवनाशीयों एवं उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से सब्जियों की गुणवत्ता स्तर में लगातार गिरावट एवं साथ ही साथ पर्यावरण पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ रहा है। इन सभी को ध्यान में रखते हुए भारतीय सब्जी अनुसंधान, वाराणसी में पिछले पॉच वर्षों से जैव उर्वरक के महत्व पर कार्य किया जा रहा है जिसमें अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं।

राइजोबियम :–ये जीवाणु खाद पौधों की जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से रहने वाले जीवाणुओं का नाम चूर्ण रूप उत्पाद हैं। इस जीवाणु का प्रयोग प्रायः दलहन वर्गीय फसलों व सब्जियों आदि जैसे चना, मटर, मूॅग, अरहर, मूॅगफली के जड़ में ग्रंथियों में पायी जाती है, जो राइजोबियम नामक जीवाणु के साथ मिलकर वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थितिकरण करके उसे पौधों के लिए उपलब्ध बनाते हैं।

लाभ :–इसके प्रयोग से 8–20 प्रतिशत नाइट्रोजन के स्तर में वृद्धि हो जाती है तथा फसलों की उपज में 15–20 प्रतिशत की वृद्धि देखी गयी है।

- ये वृद्धि कारक हार्मोन्स तथा विटामिन्स का उत्सर्जन करते हैं। जिससे पौधे के विकास में सहायता मिलती है।
- इसके प्रयोग से पौधे फास्फोरस का अधिक मात्रा में उपयोग करते हैं जिससे शाखायें अधिक बनती है और उत्पादन में वृद्धि होती है।
- लोबियास, मटर इत्यादि में पत्ती की संख्यॉ एवं फली में लगे दानों की संख्यॉ वृद्धि हो जाती है। साथ ही साथ विटामिन्स एवं अन्य मिनिरल्स के स्तर में भी वृद्धि पायी गयी है।

एजोटोबैक्टर :–ये जीवाणु खाद पौधों की जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से रहने वाले जीवाणुओं का नम चूर्ण रूप उत्पाद है, जो वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थितिकरण कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इस जीवाणु खाद का प्रयोग विभिन्न सब्जी फसलों में किया जाता है।

लाभ :–0 जैवे उर्वरक के प्रयोग से सामान्य तापमान पर सब्जियों की भण्डारण 4–6 दिन बढ़ जाती है।

0 इसके प्रयोग से मृदा में 5–18 प्रतिशत नाइट्रोजन स्तर में वृद्धि हो जाती है। जिससे उत्पादन में 8–25 प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है।
0 ये वृद्धि कारक हार्मोन्स तथा विटामिन का उत्सर्जन करते हैं, जिससे पौधों का विकास में सहायता मिलती है। टमाटर में विटामिन सी व लाईकोपिन की मात्रा में वृद्धि हो जाती है।
0 इसके प्रयोग से फसलें भूमि से फास्फोरस का अधिक मात्रा में प्रयोग कर लेती हैं, जिससे शाखाओं में कले अधिक निकलते हैं।
0 ये एन्टीबायोटिक पदार्थ का निर्माण करते हैं, जिससे पौधों में रोग प्रतिरोधी क्षमता बढ़ती है और फसल का बीमारियों से बचाव होता है।
क्षमता बढ़ती है और फसल का बीमारियों से बचाव होता है।
एजोस्पाइरिलम :–यह जीवाणु खाद की मृदा में पौधों के जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से रहने वाले जीवाणुओं का एक नम चूर्ण उत्पाद है। इसके जीवाणु जड़ों पर मण्डल बनाकर रहते हैं जो वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थितिकरण कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं।
लाभ :–0 फसलों की पैदावार में 8–15 प्रतिदिन वृद्धि तथा 5–10 कि.ग्रा. के नाइट्रोजन के स्तर में वृद्धि देखी गयी है।
0 इनसे बीज उपचार करने पर अंकुरण शीघ्र तथा स्वस्थ होता है। जड़ों का विकास अधिक एवं तीव्रगति से होता है।
0 इससे जड़ों एवं तनों का अधिक विकास होता है, जिससे पौधे में तेज हवा, अधिक वर्षा एवं सूखे को सहने की क्षमता बढ़ जाती है।
फास्फेट घोलक जीवाणु (पीएसबी) :–यह जीवाणु खाद स्वतंत्र जीवी जीवाणुओं का नम चूर्ण उत्पाद है। मृदा में प्रयोग की गयी फास्फोरस की 60–90 प्रतिशत मात्रा कैल्शियम एवं एल्युमिनियम से अभिक्रिया करके अघुलनशील अवस्था में चली जाती है जो पौधों के लिए अप्राप्त होती है। पीएसबी इस अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील फास्फोरस में बदल देता है जो पौधों के लिए प्राप्त हो जाता है। इसका प्रयोग सभी फसलों में किया जा सकता है।
लाभ :–0 इसके प्रयोग से फसलों की पैदावार में 20–30 प्रतिशत वृद्धि पायी गयी है।
0 टमाटर, भिण्डी, बैंगन आदि सब्जी फसलों में शाखाओं की संख्यॉ में वृद्धि के साथ–साथ फसलों की संख्यॉ में भी वृद्धि हो जाती है। फल सुडोल तथा उनकी भण्डारण अवधि में बढ़ जाती है इससे 25–30 किग्रा/है. की दर से उपलब्ध फास्फोरस की बचत की जा सकती है।
0 इसके प्रयोग से फसलों की जड़ों का विकास अधिक होता है जिससे पौधा स्वस्थ बना रहता है।
जैव उर्वरक की उपयोग करने की विधि :–
जैव उर्वरक को फसल के अनुसार कई विधियों द्वारा प्रयोग किया जा सकता है। इनमें मृदा उपचार, बीज उपचार तथा पौध उपचार प्रमुख है।

मृदा उपचार :–इस विधि में 2–3 कि.ग्रा. जैव उर्वरक को 40–60 कि.ग्रा. मिट्टी अथवा कम्पोस्ट खाद में मिश्रण तैयार करके एक एकड़ भूमि में बुआई के समय समान रूप से छिड़काव करें।

बीज उपचार विधि :–एक एकड़ के लिये वांछित बीजों को साफ पक्के फर्श पर या पालीथीन सीट पर छाया में रखे। इसके बाद कल्चर को चीनी या गुड़ के गाढ़े घोल में घोलने और बीजों को इसमें उपचारित करके छाया में सुखाकर तुरन्त बुआई कर दें। मटर, भिण्डी, लोबिया, राजमा आदि सब्जियों के बीजों को इस विधि से उपचारित करते हैं।

पौध उपचार विधि :–इस विधि में पौधों की जड़ों को कल्चर के घोल में डुबोकर लगाया जाता है। कुछ फसलों जैसे धान, टमाटर, बैंगन, मिर्च, प्याज इत्यादि की जड़ों को कल्चर के घोल में डुबोकर लगाया जाता है।

0 **जैव उर्वरक के प्रयोग में सावधानियॉ :–**जैवे उर्वरक को प्रयोग करने से जड़ों को कल्चर के घोल में डुबोकर लगाया जाता है।

0 पैकेट पर लिखी अंतिम तिथि से पूर्व ही कल्चर को प्रयोग कर लेना चाहिए।

0 कल्चर को ठंडे व छायादार स्थान पर ही रखें। रसायनों के संपर्क में न आने दें।

0 मिट्टी में उचित नमी तथा जीवांश की मात्रा होना चाहिए जिससे जीवाणुओं की भूमि में वृद्धि हो सके। 0 भूमि में फास्फोरस व पोटाश की उचित मात्रा डालनी चाहिए। 0 कल्चरों का उत्पादन अनेक कृषि विश्व विद्यालयों, राष्ट्रीय अथवा क्षेत्रीय जैव उर्वरक विकास केन्द्र और कई मान्यता प्राप्त संस्था करते हैं। अतः कल्चर पैकेट पर फसल का नाम, उत्पादन, तिथि, प्रयोग करने की अंतिम तिथि व बैच नम्बर स्पष्ट रूप से देखकर ही खरीदना चाहिए। 0 भूमि में जीवांश पदार्थ की मात्रा लगातार घटती जा रही है, भूमि में इनकी पूर्ति के लिये जैव उर्वरक का प्रयोग लाभदायक सिद्ध हुआ है। अतः रासायनिक खादों के प्रयोग के साथ–साथ जैव उर्वरक को प्रयोग करना नितान्त आवश्यक है, जिससे भूमि की गुणवत्ता में सुधार के साथ–साथ उत्पादन भी प्राप्त हो सके। 0 जैव उर्वरक एक ऐसा उर्वरक है जिससे सूक्ष्म जीव जीवित, सुषप्ता अवस्था में कोमलें के चूर्ण, चारकोल या रसायनिक, पोषक तत्वों के माध्यम से विद्यमान रहते हैं। 0 जैव उर्वरक के प्रयोग से फसलों के उत्पादन में ही वृद्धि नहीं देखी गयी बल्कि पौधों के विश्लेषण से यह पाया गया है कि जिन फसलों में जैव उर्वरक का प्रयोग नहीं किया गया है उनकी तुलना में जैव उर्वरक प्रयोग की गयी फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा में भी वृद्धि हुई हे। जैव उर्वरक के निर्माण आदि में रोजगार की संभावना भी अधिक है। इससे किसान को आर्थिक लाभ भी काफी है क्योंकि कीमत 5–10 रूपये पैकेट (250 ग्राम) होती है जिसका 2 किलो प्रति हेक्टर प्रयोग कर किसान अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

हरी खाद मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखने के लिए एक सस्ता विकल्प है। **सही समय पर फलीदार पौधे की खड़ी फसल को मिट्टी में ट्रेक्टर से हल चला कर दबा देने से जो खाद बनती है उसको हरी खाद कहते हैं।**

आदर्श हरी खाद में निम्नलिखित गुण होने चाहिए :–

– उगाने का न्यूनतम खर्च।

– न्यूनतम से कम पादम संरक्षण।
– कम समय में अधिक मात्रा में हरी खाद प्रदान करना।
– विपरीत परिस्थितियों में भी उगने की क्षमता हो।
– जो खरपतवारों को दबाते हुए जल्दी बढ़त प्राप्त करें।
– जो उपलब्ध वातावरण का प्रयोग करते हुए अधिकतम उपज दें।

हरी खाद बनाने के लिये अनुकूल फसलें :–

– ढेंचा, लोबिया, उड़द, मूँग, ग्वार, बरसीम, कुछ मुख्य फसलें हैं जिसका प्रयोग हरी खाद बनाने में होता है। ढेंचा इनमें से अधिक आकांक्षित है।
– ढैंचा की मुख्य किस्में सस्बेनीया ऐजिप्टिका, एस रोस्ट्रेटा तथा एस एक्वेलेटा अपने त्वरित खनिजकरण पैटर्न, उच्च नाइट्रोजन मात्रा तथा अल्प ब्रूछ अनुपात के कारण बाद में बोई गई मुख्य फसल की उत्पादकता पर उल्लेखनीय प्रभाव डालने में सक्षम है।

हरी खाद के पौधों को मिट्टी में मिलाने की अवस्था :–हरी खाद के लिये बोई गई फसल 55 से 60 दिन बाद जोत कर मिट्टी में मिलाने के लिये तैयार हो जाती है।

– इस अवस्था पर पौधे की लम्बाई व हरी शुष्क सामग्री अधिकतम होती है 55 से 60 दिन की फसल अवस्था पर तना नरम व नाजुक होता है जो आसानी से मिट्टी में कट कर मिल जाता है।
– इस अवस्था में कार्बन–नाईट्रोजन अनुपात कम होता है, पौधे रसीले व जैविक पदार्थ से भरे होते हैं इस अवस्था पर नाइट्रोजन की मात्रा की उपलब्धता बहुत अधिक होती है।
– जैसे जैसे हरी खाद के लिये लगाई गई फसल की अवस्था बढ़ती है कार्बन–नाइट्रोजन अनुपात बढ़ जाता है, जीवाणु हरी खाद के पौधों को गलाने सड़ाने के लिये मिट्टी की नाइट्रोजन इस्तेमाल करते हैं। जिससे मिट्टी में अस्थाई रूप से नाइट्रोजन की कमी हो जाती है।

हरी खाद बनाने की विधि :–

– अप्रेल मई माह में गेहूँ की कटाई के बाद जमीन की सिंचाई कर लें। खेत में खड़े पानी में 50 कि.ग्रा. प्रति है0 की दर से ढेंचा का बीज छितरा लें।
– जरूरत पड़ने पर 10 से 15 दिन में ढेंचा फसल की हल्की सिंचाई कर लें।
– 20 दिन की अवस्था पर 26 कि0 प्रति है0 की दर से यूरिया को खेत में छितराने से नोडयूल बनने में सहायता मिलती है।
– 55 से 60 दिन की अवस्था में हल चला कर हरी खाद को खेत में मिला दिया जाता है। इस तरह लगभग 10.15 टन प्रति है0 की दर से हरी खाद उपलब्ध हो जाती है।
– जिससे लगभग 60.80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन जति है0 प्राप्त होता है। मिट्टी में ढेंचे के पौधों के गलने सड़ने से बैक्टीरिया द्वारा नियत सभी नाइट्रोजन जैविक रूप में लम्बे समय के लिए कार्बन के साथ मिट्टी को वापिस मिल जाते हैं।

हरी खाद के लाभ :–

1. हरी खाद को मिट्टी में मिलाने से मिट्टी की भौतिक एवं शारीरिक स्थिति में सुधार होता है।
2. हरी खाद से मृदा उर्वरता की भरपाई होती है।
3. न्यूट्रीयन ह्यूमस की उपलब्धता को बढ़ाता है।
4. सूक्ष्म जीवाणुओं की गतिविधियों को बढ़ाता है।
5. मिट्टी की संरचना में सुधार होने के कारण फसल की जड़ों का फैलाव अच्छा होता है।
6. हरी खाद के लिए उपयोग किये गये फलीदार पौधे वातावरण से नाइट्रोजन व्यवस्थित करके नोडयूल्ज में जमा करते हैं जिससे भूमि की नाइट्रोजन शक्ति बढ़ती है।
7. हरी खाद के लिये उपयोग किये गये पौधों को जब जमीन में हल चला कर दबाया जाता है तो उनके गलने सड़ने से नोडयूल्ज में जमा की गई नाइट्रोजन जैविक रूप में मिट्टी में वापिस आ कर उसकी उर्वरक शक्ति को बढ़ाती है।
8. पौधों के मिट्टी में गलने सड़ने से मिट्टी की नमी को जल धारण की क्षमता में बढ़ोतरी होती है। हरी खाद के गलने सड़ने से कार्बनडाइ आक्साइड गैस निकलती है जो कि मिट्टी से आवश्यक तत्व को मुक्त करवा कर मुख्य फसल के पौधों को आसानी से उपलब्ध करवाती है।
9. हरी खाद के बिना बोई गई धान की फसल हरी खाद दबाने के बाद बोई गई धान की फसल में ऐकिनोक्लोआ जातियों के खरपतवार न के बराबर होते हैं जो हरी खाद के ऐलेलोकेमिकल प्रभाव को दर्शाते हैं।

जैविक कीटनाशक बनाने की विधि एवं उपयोग

जैविक कीटनाशक क्या है :–परभक्षी, परजीवी, बैक्टीरिया, फॅफूद, विषाणु, सूत्रकृमि आदि जो कीटों को रोकने या मारने की क्षमता रखते हैं, जैविक कीटनाशक कहलाते हैं।

जैविक कीटनाशक बनाने के नुस्खें :–

महुआ : इमली से दवा–सामग्री :–500 ग्राम महुआ व इमली की छाल का रस। **बनाने की विधि** :–महुआ व इमली की छाल बराबर मात्रा में लेकर कूटकर रस निकालते हैं।

उपयोग का तरीका व समय :–500 ग्राम को 15 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर छिड़काव सुबह–सुबह करते हैं। कपास की डेंडू को खाने वाले गुलाबी रंग व धब्बेदार कीड़ों का नियंत्रण किया जा सकता है।

फूल–पुड़ी की दवा– सामग्री :–1 किलो तम्बाखू, 500 ग्राम नीम का तेल, 25 ग्राम कपड़े धोने का साबुन। **बनाने की विधि** :–1 किलो तम्बाखू को 5 लीटर पानी में

गलाकर 3 दिन तक रखते हैं, चौथे दिन अच्छे से मसलकर निचोड़ कर घोल में 500 ग्राम नीम का तेल व 25 ग्राम साबुन भी मिलायें।

उपयोग का तरीका व समय :–15 लीटर पानी में 500 ग्राम तैयार घोल मिलाकर दो छिड़काव 15 दिनों के अंतर से सुबह–सुबह करें। सभी फसलों की इल्ली सफेद व हरा मच्छर, मक्खी आदि के नियंत्रण हेतु।

कामलिया कीट की दवा– सामग्री :–1 किलो तम्बाखू, 400 ग्राम नीम का तेल, 25 ग्राम कपड़े धोने का साबुन, 100 ग्राम धतूरे के पत्ते का रस।

बनाने की विधि :–1 किलो तम्बाखू को 5 लीटर पानी में गलाकर 3 दिन तक रखते हैं, चौथे दिन अच्छे से मसलकर निचोड़ कर 100 ग्राम काले धतूरे का रस 250 ग्राम हरी मिर्च कूटकर मिलाकर छाने, घोल में 500 ग्राम नीम का तेल व 25 ग्राम साबुन मिलाने से अच्छे परिणाम प्राप्त होंगे।

उपयोग का तरीका व समय :–15 लीटर पानी में 500 ग्राम तैयार घोल मिलाकर दो छिड़काव 5 दिन के अंतर से सुबह–सुबह करें, सभी फसलों पर लगने वाले कामलिया कीट की कारगर दवा है।

हरे रंग की इल्ली की दवा– सामग्री :–250 ग्राम तम्बाखू, 300 ग्राम हीराकासी, 50 ग्राम नीबू का सत। **बनाने की विधि** :–250 ग्राम तम्बाखू, 300 ग्राम हीराकासी, 50 ग्राम नीबू का सत, 2 लीटर पानी में उबालकर छान लें।

उपयोग का तरीका व समय :–250 ग्राम घोल को 15 लीटर पानी में मिलाकर सुबह–सुबह छिड़काव करें, 2.5 बीघा के लिए 3–4 टंकी पर्याप्त है।

किस–किस कीट पर काम आती है :–इससे सभी फसलों की इल्ली को रोकने में मदद मिलती है।

सावधानी :–एक सप्ताह पश्चात् ही उसका पुनः छिड़काव किया जाए अन्यथा फसल जल सकती है।

माहू (मौला) नाशक दवा– सामग्री :–10 किलो नीम की पत्ती।

बनाने की विधि :–10 किलो नीम की पत्ती को रात भर 5 लीटर पानी में भिगोकर रखें व सुबह उबालकर मसलकर छानकर घोल तैयार करे।

उपयोग का तरीका व समय :–इस पूरे घोल को 100 लीटर पानी में घोलकर सुबह–सुबह छिड़काव करें।

किस–किस कीट पर काम आती है :–इससे माहू व पत्ते खाने वाले सभी कीड़े मर जाते हैं।

इल्ली मच्छर मार दवा– सामग्री :–5 लीटर गोमूत्र, 100 धतूरे के पत्त।

बनाने की विधि :–5 लीटर गोमूत्र में 100 धतूरे के पत्तों को कूटकर मिलाकर छान लें।

उपयोग का तरीका व समय :–1 लीटर गोमूत्र घोल को 15 लीटर पानी में मिलाकर सुबह–सुबह छिड़काव करें।

किस–किस कीट पर काम आती है :–यह दवाई इल्ली और मच्छर को मारने की अचूक दवा है।

सावधानी :–15 दिन से ज्यादा पुराना गोमूत्र प्रयोग न करें। 15 दिन बाद ही इस दवा का फसल पर दोबारा प्रयोग करना चाहिए।

हरे व सफेद मच्छर व मक्खी मारने की दवा–सामग्री :–500 ग्राम तम्बाखू पत्ती व 20 ग्राम साबुन।

बनाने की विधि :–500 ग्राम तम्बाखू को 5 लीटर पानी में आधा घण्टे उबालकर छानकर, ठण्डा कर 20 ग्राम साबुन अच्छे से घोलकर दवाई तैयार करें।

उपयोग का तरीका व समय :–1 लीटर घोल में 15 लीटर पानी मिलाकर पौधों पर छिड़काव करें।

किस–किस कीट पर काम आती है :–यह दवाई हरे व सफेद मच्छर और मक्खी को मारने की अचूक दवा है।

सावधानी :–दवाई छिड़कते समय दवाई मिट्टी पर नहीं गिरना चाहिए।

इल्ली मारने की दवा– सामग्री :–1 किलो लहसुन, 200 ग्राम मिट्टी का तेल, 2 किलो हरी मिर्च।

बनाने की विधि :–1 किलो लहसुन छीलकेर, पीसकर 200 ग्राम मिट्टी के तेल से भिगोकर रात भर रखना फिर सुबह 2 किलो मिर्ची पीसकर घोलना, अच्छे से मिलाना।

उपयोग का तरीका व समय :–इस घोल को 200 लीटर पानी मिलाकर फसल पर छिड़कना।

किस–किस कीट पर काम आती है :–यह दवाई किसी भी फसल पर इल्ली व सूण्डी लगने पर प्रयोग की जा सकती है।

चने व कपास की इल्ली नाशक दवा– सामग्री :–10 किलो गोमूत्र, 1 किलो नीम या बेल या आकड़े के पत्ते, 100 ग्राम लहसुन।

बनाने की विधि :–10 लीटर गोमूत्र में 1 किलो नीम का या बेल या आकड़े के पत्ते मिलाकर 15 दिन तक रखें। 15 दिन बाद इस घोल में 100 ग्राम लहसुन डालकर इतना उबालें कि घोल 5 लीटर रह जायें।

उपयोग का तरीका व समय :–15 लीटर की स्प्रे टंकी में 750 ग्राम मिश्रण डालकर फसल पर छिड़काव करें।

किस–किस कीट पर काम आती है :–चने व कपास पर लगने वाली चिकनी व बाल वाली इल्ली के साथ–साथ माहू की अचूक दवा है।

कीड़े मारने की दवा– सामग्री :–5 लीटर गोमूत्र, 1 लीटर निरगुण्डी का रस (30–40 निरगुण्डी के पत्तों का 10 लीटर पानी में 1 लीटर रह जाने पर उबालें) फिर 1 लीटर हींग पानी (10 ग्राम हींग को 1 लीटर पानी में घोलना)।

बनाने की विधि :–5 लीटर गोमूत्र, 1 लीटर निरगुण्डी का रस, 1 लीटर हींग पानी तीनों 8 लीटर पानी के साथ मिलाकर फसल पर छिड़कते हैं।

उपयोग का तरीका व समय :–7 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

किस–किस कीट पर काम आती है :–यह दवाई सभी फसलों पर लगने वाले कीड़ों के लिए अचूक दवा है।

सावधानी :–निरगुण्डी व हींग पानी बताई गई मात्रा के अनुसार ही मिलाएँ।

नीम खली अर्क की दवा– सामग्री :–5 किलो निंबोली की खली या 3 किलो कुटी हुई निंबोली।

बनाने की विधि :–5 किलो निंबोली खली को 15 लीटर पानी में 3 दिन तक भिगोकर रख दं। चौथे दिन दारू निकाले। 100 ग्राम धतूरे का रस, 250 ग्राम हरी मिर्च कूटकर निकालने की विधि से इसका तीन लीटर अर्क निकाले।

उपयोग का तरीका व समय :–1.5 लीटर अर्क 15 लीटर पानी में मिलाकर सुबह–सुबह छिड़काव करें। यह दवा तने व पत्ते पर लगने वाली इल्ली, मच्छर व माहू के लिए असरकारक है।

कपास में माहू लगने पर :–250 से 300 धतूरे के पत्ते व टहनियों को 5 लीटर पानी में भिगो दें, फिर इसे कुनकुना गर्म करें। ठण्डा करके फसल पर छिड़काव करते हैं, जिससे तुरंत माहू करने लगता है। इस दवा का प्रयोग एक माह पुरानी फसल पर ही करना चाहिए।

1. निंबोली को पीसकर 100 ग्राम पावडर एक पौधे के चारों और 4 इंच गहराई में डालने से दीमक, गुबरैला, माहू आदि से छुटकारा मिलता है।
2. गौमूत्र का सुबह–सुबह फसल पर छिड़काव करने से कीड़े के प्रथम प्रकोप पर नियंत्रण किया जा सकता है।
3. बैंगन व टमाटर पर चित्ती रोग लग जाता है। इस हेतु गाय के गोबर को पतला घोलकर पौधे की जड़ के पास डालते हैं।
4. आलू के पत्ते मुरझाने पर 10 किलो लकड़ी की राख में 50 ग्राम फिनॉयल की गोली का पावडर व 50 ग्राम तम्बाखू के पत्ते को मिलाकर मिश्रण बनाकर सुबह–सुबह फसल पर छिड़कने से लाभ होता है।
5. बैंगन, टमाटर, मिर्ची व अन्य सब्जियों पर लगने वाले कीड़ों को मारने के लिए लकड़ी की ठण्डी राख सुबह–सुबह भरकें, लाभ होगा।
6. टमाटर की पत्तियों व टहनियों को उबालकर ठण्डी कर फसल पर पत्ते खाने वाली हरी व काली मक्खियों को मारने के लिए छिड़काव करें।
7. करेले पर अर्धगोलाकर लाल भूरा रंग का कीड़ा जिस पर काले रंग के चकते होंते हैं ये सिगार के आकार के अण्डे देते हैं। इनसे पीले रंग की कांटेदार सुडिया निकलती हैं। ये कीड़े व सुंडियॉ दोनों पत्तों को खाते हैं। इसे रोकने के लिए 60 ग्राम साधारण साबन को आधा लीटर पानी के घोल में 1 लीटर नीमा का तेल मिलाकर घोल तैयार करें, फिर इस घोल में 20 लीटर पानी अच्छी तरह मिलाकर 400 ग्राम पिसी हुई लहसुन को घोले, फिर छानकर फसल के पत्तों पर छिड़काव करें।
8. मिर्ची के फूल झड़ने से रोकने के लिए ईंट, भट्टे से राख लाकर गोबर के साथ अच्छी तरह मिलाकर पानी में पतला घोल बनाकर पौधों पर छिड़कने से लाभ होगा।
9. मक्का पर लगने वाली टिड्डी से बचने के लिए 3 किलो प्याज पीसकर उसका रस निकालकर पानी में घोलकर फसल पर छिड़क देते हैं, जिसकी गंध के कारण टिड्डी खेत के पास तक नहीं आती है

10. वह इल्ली जो पौधे के पत्ते खाने के साथ–साथ तना खाकर पौधों को सुखा देती है, इससे बचने के लिए 10 किलो नीम खली को पानी में घोलकर फसल पर छिड़काव करें। चने पर लगने वाली इल्ली से बचने के लिए 5 किलो आडूसा की टहनियों का रस निकालकर 10 लीटर पानी में मिलाकर 2–3 बार कपड़े से छानकर 5 लीटर पानी मिलाकर सुबह–सुबह फसल पर छिड़काव करें।

हरी इल्ली से निदान :–10 लीटर गोमूल में 5 किलो गिदान की पत्तियॉ एवं 250 ग्राम लहसुन को बारीक पीसकर डाल दें। इसे 48 घण्टे तक गोमूत्र में पड़ रहने दें, तत्पश्चात् इसको छानकर अर्क निकाल लें। 100 से 150 मिली, प्रति 10 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करने से चने की इल्ली तथा चितकबरी इल्ली पर प्रभावी नियंत्रण होता है। **यह नुस्खा ग्राम मलगॉव** के कृषकों के द्वारा परीक्षित है। उन्होंने इसका उपयोग कर जैविक कपास का उत्पादन किया है।

1. 2 लीटर छाछ, 200 ग्राम तम्बाखू का पावडर व 2 पत्ते ग्वारपाठा को 15 लीटर पानी में मिलाकर 15 दिन के लिए रख देते हैं, फिर छानकर 15 लीटर पानी में 100 ग्राम सत का 8–10 दिन के अंतराल से छिड़काव करने से मूॅग का उत्पादन अच्छा होता है।
2. 1 किलो तम्बाखू की पत्ती को 10 लीटर पानी में आधे घण्टे तक उबालकर ठंडाकर छानकर 20 ग्राम साबुन को अलग से 4.5 लीटर में अच्छे से घोलकर तम्बाखू के घोल में मिला लें, फिर 30 लीटर पानी मिलाकर छिड़काव करें। इससे पत्ते काटने वाली इल्ली व हरे सफेद मच्छर, मक्खियों, तना भेदक इल्ली व डेंडू खाने वाली इल्ली व कीड़े मर जाते हैं।
3. 1 किलो तम्बाखू को 200 ग्राम चूने से बुझे 10 लीटर गर्म पानी में एक दिन के लिए रखें, फिर मसलकर छानकर 100 लीटर पानी मिलाकर फसल पर छिड़काव करें, जिससे सफेद मक्खी, मच्छर, इल्ली व नरम शरीर वाले कीड़े मर जाते हैं।
4. नमेड़ी (बेशरम बेल) के पत्तों को कूटकर रस निकालें, 250 ग्राम रस व 20 ग्राम साबुन को 15 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें, जिससे मच्छर, मक्खी व इल्ली मर जाती है।
5. सनाय व नीम को बराबर मात्रा में लेकर कूटकर रस निकालें, 250 ग्राम रस व 20 ग्राम साबुन को 15 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें, जिससे मच्छर, मक्खी व इल्ली मर जाते हैं।
6. 10 लीटर छाछ को एक मटके में एक माह तक रखें। बाद में इसमें गेहूॅ का आटा आधा किलो मिलाएं, इस मिश्रण को पतला करके चने के खेत में चने की इल्ली का नियंत्रण करने के लिए छिड़काव करें।
7. चने का उकठा रोग (फ्यूजेरियम विल्ट) के नियंत्रण के लिए चने को छाछ से बीजोपचार करें। जिन खेतों में यह रोग होता है, उसमें चने को चार घण्टे छाछ में भिगोने के बाद छांव में हल्का सुखाकर बोएं।

8. बोगनविलियां की पत्तियों को कच्चे दूध से भिगोकर रात भर रखें, दूसरे दिन सुबह इन पत्तियों को निचोड़कर उसका अर्क निकाल लें। इसका 10 प्रतिशत का घोल बनाकर तम्बाखू, टमाटर और मिर्च में होने वाले कुकड़ा रोग (चुर्रा–मुर्रा) को नियंत्रण करने के लिए छिड़काव करें।
9. गोमूत्र का कीटनाशक के रूप में उपयोग करने के लिऐ गोमूत्र का 5 प्रतिशत घोल उपयोग करें, 10 लीटर देशी गाय का गोमूत्र तांबे के बर्तन में लें। उसमें नीम के एक किलो पत्ते डालें और 15 दिन तक गलने दें, फिर उसे तांबे की कढ़ाई में उबाले पचास प्रतिशत रह जानें पर नीचे उतार लें, छान लें। इस औषधि में 100 गुना पानी मिलाकर छिड़काव कर दें।
10. 5 लीटर मट्ठे में 1 किलो नीम के पत्ते व धतूरे के पत्ते डालकर 10 दिन सड़ने दें। इसके बाद मिश्रण को छानकर इल्लियों का नित्रण करें।
11. 5 किलो नीम के पत्ते 3 लीटर पानी में डालकर उबाल लें। जब आधा रह जाए, तब उसे छानकर 150 लीटर पानी में घोल तैयार करें। इस मिश्रण में 2 लीटर गोमूत्र मिलायें, अब यह मिश्रण एक एकड़ के मान से फसल पर छिड़कें।
12. 1/2 किलोग्राम हरी मिर्च व लहसुन पीसकर 150 लीटर पानी में डालकर छान लें तथा 1 एकड़ के मान से फसल पर छिड़कें।
13. मारूदान, तुलसी (श्याम) तथा गेंदे के पौधे फसल के बीच में लगाने से इल्ली का नियंत्रण होता है।
14. मक्का भुट्टे से दाना निकालने के बाद जो गिल्लियॉ बचती हैं, उन्हें एक मिट्टी के घड़े में इकट्ठा कर लें। इस घड़े को खेत में इस प्रकार गाड़ें कि घड़े का मुॅह जमीन से कुछ बाहर निकला हो। घड़े के ऊपर कपड़ा बांध दें तथा उसमें पानी भर दें। कुछ दिनों में ही आप देखेंगे कि घड़े में दीमक भर गई है। इसके उपरांत घड़े को बाहर निकालकर गरम कर लें, ताकि दीमक समाप्त हो जाए। इस प्रकार के घड़े को खेत में 100–100 मीटर की दूरी पर गड़ाकर तथा करीब 5 बार गिल्लियॉ बदलकर यह क्रिया दोहराएं, खेत में दीमक समाप्त हो जाएगी।
15. सुपारी के आकार की हींग एक कपड़े में लपेटकर तथा पत्थर में बांधकर खेत की ओर बहने वाली पानी की नाली में रखे, उससे दीमक रोग नष्ट हो जाएगा।

वानस्पतिक कीटनाशक

वनस्पति	कौन सा भाग उपयोगी	कैसे काम करती है	किस कीट पर प्रभावशाली
बेखंड–बच	जड़	संपर्क से गंध विरोध	चीटियॉ
लहसुन	गूदा	फॅफूदनाशक	
सुगंधी वच्छ जड़	गंध विरोधी	फल मक्खी	धान का भूसा तथा भूरा सड़न रोग
सीताफल	पत्ते/बीज	संपर्क	इल्ली
हल्दी	जड़ और तना	कीड़ों की भूख	लाल मकड़ी, थ्रिप्स, कई कीट

		मिटती है	
गवती चाय	पत्ते	संपर्क विष	मच्छर, कई कीट
बैचन्दी	ट्यूबर	संपर्क विष	मच्छर, कई कीट
ईथी	पूरा पौधा	संपर्क विष	कई कीट
तम्बाखू	पूरा पौधा	संपर्क विष	गोभी का पतंगा
थ्गलोइ	बेल	संपर्क विष	गोभी का पतंगा
टून	पूरा पौधा	संपर्क विष	मोला
ज्ंगली	पूरा पौधा	संपर्क विष	इल्लियॉ, मोला, अदरक की माहू
क्वासिया	पूरा पौधा	संपर्क विष	माहू और आरा मक्खी के लिये

16. 5 लीटर देशी गाय के मट्ठे में 5 किलोग्राम नीम के पत्ते डालकर 10 दिन तक सड़ाएं, बाद में नीम की पत्तियों को निचोड़ लें। इस नीमयुक्त मिश्रण को छानकर 150 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ के मान से समान रूप से फसल पर छिड़काव करें। इससे इल्ली व माहू का प्रभावी नियंत्रण होता है।
17. 5 लीटर मट्ठे में 1 किलोग्राम नीम के पत्ते व धतूरे के पत्ते डालकर 10 दिन सड़ने दें। इसके बाद मिश्रण को छानकर इल्लियों का नियंत्रण होता है।
18. 5 किलोग्राम नीम के पत्ते 3 लीटर पानी में डालकर उबालें। जब आधा रह जाए तब उसे छानकर 150 लीटर पानी में घोल तैयार करें। इस मिश्रण में 2 लीटर गोमूत्र मिलाएं। अब यह मिश्रण 1 एकड़ के मान से फसल पर छिड़कें।
19. 1/2 किलोग्राम हरी मिर्च व लहसुन पीसकर 150 लीटर पानी में डालकर छान लें तथा 1 एकड़ के लिए इस घोल का छिड़काव करें।
20. टिन की बनी चकरी खेतों में लगाने से भी इल्लियॉ गिर जाती है।
21. 1 लीटर मट्ठे में चने के आकार के हींग के टुकड़े मिलाकर उससे चने का बीजोपचार करें। तत्पश्चात् बोनी करें। सोयाबीन, उड़द, मूॅग एवं मसूर के बीजों को अधिक गीला न करें।
22. 400 ग्राम नीम के तेल में 100 ग्राम कपड़े धोने वाला पाउडर डालकर खूब फेंटे, फिर इस मिश्रण में 150 लीटर पानी डालकर घोल बनाएं। यह एक एकड़ के लिए पर्याप्त है।
23. नीम बीज को नौ ग्राम पाउडर में नौ लीटर पानी में मिलाकर 0.1 प्रतिशत सान्द्रता का अवलम्बन बनाया जाता है। इसका छिड़काव करने से यह टिड्डी, आर्मी वर्म तथा पत्ती खाने वाले कीटों को रोकता है, अर्थात कीटों को पौधे से दूर रखता है।
24. नीम बीज की निम्बोली पाउडर 1.2 किलोग्राम यदि 100 किलोग्राम गेहूॅ बीज में मिलाया जाए तो यह चावल की सूंडी तथा अन्य कीटों का नियंत्रण होता है।
25. 2 किलो ग्राम कुचले हुए नीम बीज को यदि मूॅग, चना, चावल के 100 किलोग्राम बीज में मिलाया जाए तो यह क्रमशः 8,9 एवं 12 महीने के लिए पल्स बीटल से सुरक्षा करता है।
26. सीताफल के बीज के तेल का 10 प्रतिशत इमल्शन छिड़के या सीताफल के बीज को एक दो दिन पानी में भिगोकर रखें और बीज को पीसकर अर्क को

छानकर छिड़कें। सीताफल के बीज को भूरक चूर्ण का उपयोग माहो, हरे मच्छर, इल्लियॉ, भृंग इत्यादि कीटों को नियंत्रित करता है। यह स्पर्श व उदर विष है।

27. सीताफल व अर्नी के बराबर पत्ते लेकर 1 लीटर पानी में उबालना व मसलकर छानकर रस एकत्र करें। 200 ग्राम रस में 10 लीटर पानी मिलाकर फसल पर छिड़काव करें।
28. 5 किलो धतूरा की पत्ती, तना व जड़ को कूटकर पतले थैले में बांध लें। खेत में सिंचाई करते समय जहॉ पाईन लाईन का पानी गिरता है, वहॉ थेले में बंधी दवा को रख दें, इससे दीमक का नियंत्रण होगा।
29. करंजल वनस्पति व तुलसी के रसायन जीवाणु जनित के प्रति नैसिर्गिक प्रतिरोधक शक्ति उत्पन्न होती है। यह रसायन फूल गोभी, मिर्च, टमाटर के फल सड़न, कपास मिर्च के कोणीय धब्बे व नींबू, संतरा, मौसम्बी के केंकर की रोकथाम करते हैं।
30. एक किलो राख को 10 लीटर पानी में मिलकर रात भर रखें। उसके उपरांत उसे छानकर उसमें एक लीटर छाछ या मठा मिलायें। इस मिश्रण को तीन गुना पानी में मिलाकर छिड़काव करें। छिड़काव का विपरीत असर पत्तियों पर तो नहीं है, इसे देखने के लिये एक दो पौधें पर छिड़काव करके सुनिश्चित कर लें। इसके उपयोग से भभूतिया व लाल पत्तियों कीी समस्या का नियंत्रण संभावित है।
31. महुआ व इमली की छाल बराबर मात्रा में लकर कूटकर रस निकालते हैं। 500 ग्राम रस को 15 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर छिड़काव सुबह–सुबह करें। कपास के डेण्डू को खाने वाली गुलाबी रंग व धब्बेदार कीड़ों को मारती है।
32. 50 ग्राम राख में 25 ग्राम चूना मिलाकर 4–5 लीटर पानी में मिलायें व थोड़ा समय रखें। तद्पोरान्त उसे छानकर डालने से ककड़ी के कीड़ों की रोकथाममें उपयोगी पाया गया है।
33. 1 किलो ग्राम राख में 10–15 मिली केरोसिन मिलाकर प्रातःकाल में पाधों पर भुरकने से रस चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम संभव है। आवश्यकता अनुरूप 5–7 दिन के उपरान्त पुनः भुरकाव करें।

जैविक खेती से उपचार :–बड़ की मिट्टी में अमृत पानी की इतनी मात्रा मिलायें कि वह घोल बीज पर छिड़कने के लायक हो जायें। बीज पर उक्त घोल को छिड़ककर अच्छी तरह मिलाने के लिए हल्के हाथों से मिलावें या सूपे में बीज लेकर उसमें उक्त घोल छिड़काव करें एवं सूपे को हिलाकर बीज को उपचारित कर या पुराना मटका लेकर उसमें थोड़ा बीज उसमें घोल का छिड़काव कर मटके को अच्छी तरह हिलावें ताकि घोल का बीज पर अच्छी तरह लेप हो जायें। इस लेप दिए गए बीज को छाया में सुखा लें फिर बुआई करें।

1. अरहर, सोयाबीन, मूॅगफली के बीज का छिलका बहुत नरम होता है। इसलिए ऐसे बीजों पर हल्का लेप चढ़ाकर शीघ्र बुआई करना चाहिए।

2. जिन फसलों की रोपाई होती है जैसे मिर्ची, टमाटर, बैंगन इत्यादि की रोप की अमृत जड़ों को रोपने के पूर्व 10 मिनिट तक अमृत पानी में डुबोकर रखने की बीमारियों का आक्रमण बहुत कम हो जाता है।
3. हल्दी, अदरक , आलू, गन्ना, केला, अरबी इत्यादि फसलों की गांठों या कंदों को अमृत पानी में 10 मिनिट तक डुबोकर लगाना चाहिए, जिससे स्वस्थ अंकुरण होगा और फसल बीमारियों से बहुत कम प्रभावित होती है।

कीड़ों की रोकथाम में लहसुन का उपयोग :– लहसुन गांवों में आसानी से किसानों के पास उपलब्ध है। लहसुन के अर्क का उपयोग कीटनाशक के रूप में किया जा सकता है। लहसुन में एलीसीन नाम तत्व होता है एवं कुछ उड़नशील तेल जैसे हावलीक डायसल्फाइड एवं सल्फो होता है, जो कि फसलों में लगने वाले कीड़ों को नियंत्रित करने में सहायक होते हैं।

लहसुन का अर्क निकालने की विधि :–85 ग्राम लहसुन को 50 मिली मिट्टी के तेल में मिला 24 घंटे पड़ा रहने दें, फिर इसमें 10 मिली साबुन का घोल मिलाकर अच्छी तरह हिलायें, ताकि पूरा मिश्रण एक सा हो जाये। तत्पश्चात् बारीक छन्नी या कपड़े से छानकर अर्क को एक पात्र में निकालकर उपयोग हेतु रख दें। उपयोग के समय एक भाग अर्क तथा 19 भाग पानी मिलाकर घोल का छड़काव प्रातः काल करने से कपास एवं सब्जियों में लगने वाले कीड़ों जैसे माहू एवं इल्लियों को नियंत्रित करता है।

लहसुन के साथ हरी मिर्च मिलाकर अर्क बनाने की विधि :–हरी मिर्च एवं लहसुन की समान मात्रा लें। दोनों को पीसकर अर्क तैयार कर लें एवं इस अर्क का एक भाग एवं 200 भाग पानी मिलाकर हैलियोथिस एवं अन्य इल्लियों तथा माहू के नियंत्रण के लिए छिड़काव करें।

सावधानी रखें पेस्टीसाईड्स के प्रयोग करते समय :–

1. कीटनाशक दवाओं को भोजन या खाद्य पदार्थों के समीप नहीं रखे।
2. नंगे हाथ से कीटनाशक दवाओं को भी नहीं छुये।
3. कीटनाशक दवाओं की महक/फुहार से दूर रहें।
4. कीटनाशक दवा का प्रयोग करते समय धूम्रपान, खाना और पीना नहीं करें।
5. घोल बनाने के बादव प्रयोग के पश्चात हाथ को साबुन से अच्छी तरह साफ करें।
6. हवा की ओर मुँह करके कभी बुरकाव व छिड़काव न करें।
7. खाली टीन या बोरियों को पुनः किसी काम में न लायें।
8. कीटनाशक विष के डिब्बों या उपकरणों को तालाबों या पानी की नालियों में नहीं धोयें।
9. छिड़काव के बाद पहने हुए कपड़े तुरन्त उतार देने चाहिए और उन्हें दुबारा अच्छी तरह से साफ करने के बाद ही उपयोग में लायें।
10. किसी भी कीट विष को निर्देशित मात्रा के अनुसार ही प्रयोग करें। अधिक मात्रा में प्रयोग करने से खर्चा भी अधिक होगा, कीड़े भी कम मरेंगे और

उसके अंदर प्रतिरोधक क्षमता पैदा हो जायेंगी और फिर वे जल्दी मरेंगे ही नहीं।

दलहनी फसलों में जैविक कीट प्रबंधन

वर्तमान परिस्थितियों में उन्नत कृषि प्रौद्योगिकी द्वारा विभिन्न दलहनी फसलों की खेती की जा रही है। ऐसी स्थिति में अधिक पैदावार बढ़ाने के लिए हानि पहुॅचाने वाले कीटों का प्रबंधन अति आवश्यक है। साधारणतः नुकसान पहुॅचाने वाले कीटों की रोकथाम के लिए रासायनिक कीटनाशकों का अनावश्यक उपयोग हो रहा है। ये विषैले कीटनाशक हमारे भोजन, पशुओं के चारे, मिट्टी, पानी तथा हवा में अपना जहरीला प्रभाव छोड़ते हैं साथ ही साथ ये कीटनाशक नुकसान पहुॅचाने वाले कीटों को मारने वाले किसानों के मित्र जीवों को भी मार देते हैं। मित्र जीवों की संख्यॉ न होने/कम होने के कारण हानिकारक कीट निरंकुश रूप से बढ़ने लगते हैं। अतः आजकल वैज्ञानिक समन्वित नाशी कीट प्रबंधन अपनाने की सलाह दी जा रही है जिसमें जैविक कीट प्रबंधन का विशेष महत्व है। जैविक कीट प्रबंधन से तात्पर्य है ''मित्र जीवों द्वारा हानिकारक कीटों को नष्ट करना'' इस प्रकार के प्रबंधक को सुविधा की दृष्टि से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है :–

1. प्राकृतिक जैविक कीट प्रबंधन। 2. जैविक कीटनाशों द्वारा कीट प्रबंधन

प्राकृतिक जैविक कीट प्रबंधन :– विभिन्न प्रकार की दलहनी फसलों जैसे अरहर, उड़द, मूॅग, तिवड़ा, चना, मसूर आदि को कई प्रकार के कीट अलग–अलग फसल अवस्थाओं में नुकसान पहुॅचाते हैं। उदाहरणार्थ– अरहर की फसल में बीज अंकुरण से लेकर पकने की अवधि तक लगभग 200 प्रकार के कीट यदा–कदा नुकसान पहुॅचाते हैं। इस कारण फसलों की पैदावार में कमी जा जाती है। दलहनी फसलों में हानिकारक कीटों के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के मित्र जीव जैसे परभक्षी, परजीवी (कीटों में बीमारी फैलाने वाले) पाये जाते हैं। ये मित्र जीव हानिकारक कीटों की वृद्धि पर नियंत्रण रखते हैं जो इस प्रकार से हैं :–

परभक्षी मित्र जीव :–इस श्रेणी में आने वाले मित्र जीवों का जैविक प्रबंधन में विशेष स्थान है। ये हानिकारक कीटों की विभिन्न अवस्थाओं (अंडा, शिशु, इल्ली, शंखी तथा प्रौढ़) को खाते हुए अपना जीवन–यापन करते हैं। प्रमुख रूप से परभक्षी मित्र जीवों को दो समूहों में बांटा जा सकता है।

थलसेना :–इस समूह के परभक्षी जीव पौधे में रहकर हानिकारक कीटों की विभिन्न अवस्थाओं को खाते हैं। जैसे पक्षी (कौआ, घरेलू चिड़िया, मैना आदि) मकड़िया, छिपकलियॉ, मेन्टिड, काक्सीनेला, रिजुविड बग, क्रायसोपर्ला, कई प्रकार के बर्र आदि।

नभसेना :–इस प्रकार के परभक्षी जीव अरहर की फसल के आसपास उड़ते रहते हैं तथा हानिकारक कीटों को पकड़कर खाते हैं जैसे बड़ा पतंगा, रोबर पतंगा आदि।

परजीवी मित्र जीव :–परजीवी मित्र जीव, परभक्षियों की अपेक्षा अधिकांशतः आकार में छोटे होते हैं कुछ परजीवी साधारण ऑखों से दिखाई भी नहीं देते हैं। इनको देखने के लिए यंत्र (सूक्ष्मदर्शी) की जरूरत पड़ती है। इस प्रकार इन परजीवों की तुलना में

गुप्तचर सेना से की जा सकती है। ये हानिकारक कीटों के जीवन विभिन्न अवस्थाओं की संख्याॅ पर प्रभावशाली रूप से अंकुश लगाते हैं। परभक्षी कीटों को अपना जीवन चक्र पूरा करने के लिए कई हानिकारक कीटों की विभिन्न अवस्थाओं जैसे अंडा, शिशु, अल्ली शंखी एवं प्रौढ़ के अंदर–बाहर या पास में अंडे देती हैं। इन अंडों से इल्लियॉ निकलती हैं जो धीरे–धीरे हानिकारक कीटों अंदर या बाहर न खाती हुई जीवन यापन करती हैं जिससे प्रभावित कीट भोजन करना बंद या कम कर देते हें। इसके बाद मित्र कीटों की पूर्ण विकसित इल्लियॉ या कृमि कोष या शंखी हानिकारक कीटों के शरीर को चीरकर बाहर आ जाती है, जिससे नुकसान करने वाली कीट कर जाते हैं।

दलहनी फसलों में विभिन्न प्रकार के मित्र परजीवी कीट हानिकारक कीटों के साथ–साथ पाये जाते हैं। इनमें से एजेन्टोलिस, केम्पोलिटिस, इयूसेलेटोरिया, बेकान बेचपासिस, ग्रायन एन्टेस्टी, डायडिगमा, युडरस, एग्रोमाइजी आदि प्रमुख रूप से हानिकाक कीटों की विभिन्न अवस्थाओं को परजीवीयुक्त करते हुए अपना जीवन यापन करते हैं। इस प्रकार परजीवी मित्र हानिकारक कीटों की बढ़वार पर प्रभावशाली रूप से अंकुश लगाते हैं।

रोगाणु :–विभिन्न प्रकार के रोगाणुओं (कीटों में बीमारी फलाने वाले) की तुलना युद्ध में प्रयुक्त होने वाले रासायनिक हथियारों से की जा सकती हैं। जिस प्रकार युद्ध में प्रमुक्त रासायनिक शस्त्र मनुष्यों में विभिन्न प्रकार की बीमारियॉ फैलाते हैं, इसी प्रकार विभिन्न प्रकार के रोगाणु जैसे फॅफूद, जीवाणु विषाणु आदि कीटों को रोग ग्रसित करते हैं जिससे वे मर जाते हैं। सूक्षम जीवन ''विषाणु'' इल्ली अवस्था वाले हानिकारक कीटों पर प्रभावशाली रूप से अंकुश लगाते हैं। इनमें न्यूक्लियर पॉलीहेड्रोसिस विषाणु (एन.पी. व्ही.) प्रमुख हैं। चने की इल्ली (जो दलहनी फसलों में फलियों को नुकसान करती हैं) में यह बीमारी अधिक होती है। इस विषाणु से ग्रसित इल्लियॉ पौधे में उल्टी लटकी रहती हैं। इन इल्लियों से विषाणु युक्त द्रव निकलता है जिससे पौधों के विभिन्न भाग विषाणु युक्त हो जाते हैं। इन विषाणु युक्त पौधों के भागों (पत्तियों, फूलों, फलियों) को जो इल्लियॉ खाती हैं वे भी रोगित होकर मर जाती हैं। इस प्रकार रोग का यह चक्र चलता रहता है।

जैविक कीटनाशों द्वारा कीट प्रबंधन :–आजकल विभिन्न प्रकार के जैविक कीटनाशक बाजार में उपलब्ध है। आवश्यकतानुसार इनका उपयोग करने पर ये हानिकारक कीटों को परजीवीयुक्त कर, खाकर या रोगित हो कर मार देते हैं। प्रमुख रूप से चार प्रकार के जैविक कीटनाशकों का उपयोग हानिकारक कीटों के समुचित प्रबंधन के लिए किया जाता है।

अण्ड परजीव जैविक कीटनाशक :–जैविक नियंत्रण में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। प्रौढ़ मित्र परजीवी की मादा अपने अण्डारोपक यंत्र के द्वारा हानिकारक कीटों के अंडों के अंदर अंडे देती है। इन अंडों से इल्ली/इल्लियॉ निकलती हैं। ये परजीवी इल्लियॉ धीरे–धीरे हानिकारक कीटों के अंडों के अंदर खाते हुए जीवन यापन करती हैं तथा बाद में कीटों के अंडों से हानिकारक इल्लियों की जगह मित्र परजीवी से प्रौढ़ निकलते हैं। इस प्रकार हानिकारक कीटों की संख्या नहीं बढ़ पाती है।

उदाहरण :–ट्रायकोग्रामा (मात्रा 50,000 अंडे/हेक्टर) इस मित्र परजीवी से युक्त अंडे, कागज के कार्ड पर चिपके रहते हैं, जिसे ''ट्राइको कार्ड'' कहते हैं। इन अंडों से युक्त कार्ड के छोटे–छाटे टुकड़े करके एक हेक्टर (2.50 एकड़) क्षेत्र की फसल में जगह–जगह लगा देना चाहिए। आवश्यकतानुसार 10 दिनों बाद पुनः इतने (50,000 अंडे/हेक्टर) अंडों को को कार्ड की सहायता से फसल पर छोड़े।

नियंत्रण :–चने की फली मेदक, कम्बल कीट आदि।

परभक्षी जैविक कीटनाशक :–विभिन्न प्रकार के परभक्षी मित्र जीव हानिकारक कीटों की विभिन्न अवस्थाओं (अंडो, शिशुओं, इल्लियों एवं प्रौढ़ों) को खाकर जीवन निर्वाह करते हैं।

उदाहरण :–क्रायसोपर्ला (मात्रा 2500 अंडे या इल्लियॉ/हेक्टर)

नियंत्रण :–माहू, सफेद मक्खी, थ्रिप्स आदि।

जीवाणु जैविक कीटनाशक :–ये कीटनाशक पंखी समूह के कीटों को प्रभावशाली रूप से नियंत्रित करते हैं। कीटों की इल्लियॉ पत्तियों, फूलों एवं फल्लियों को खाकर नुकसान पहुॅचाती है। इस प्रकार के कीटनाशक खाने के साथ ही इल्लियों के शरीर के अंदर चले जाते हैं। कीटनाशक के प्रभाव से इल्लियॉ फसल को नुकसान करना बंद कर देती है। इनकी आहार नलिका प्रभावित होने के कारण इनको उल्टी एवं दस्त होने लगती हैं। इसके बाद पूरे शरीर में लकवा हो जाता है तथा इल्लियॉ मर जाती है। बेसिलस थ्यूरीजिएन्सिस नामक जैविक कीटनाशक विभिन्न फसलों को नुकसान पहुॅचाने वाले 150 प्रकार के पंखी समूह के कीटों को नियंत्रित करता है।

उदाहरण :– बेसिलस थ्यूरीजिएनिसम (मात्रा 750 से 1000 मिली/हेक्टर)

नियंत्रण :–चने की फली भेदक, तम्बाखू, इल्ली, पिच्छकी शलभ आदि।

विषाणु जैविक कीटनाशक :–इस प्रकार के कीटनाशकों का फसल पर छिड़काव करने से पौधों के विभिन्न भाग (पत्तियॉ, फूल एवं फलियॉ) विषाणु युक्त हो जाते हैं। विभिन्न प्रकार के इल्ली अवस्था वाले कीट विषाणु युक्त पत्तियों फूलों तथा फलियों को खाते हैं जिससे इल्लियों के अंदर विषाणु चले जाते हैं। ये विषाणु धीरे–धीरे कीटों के अंदर फैलते हैं। इस प्रकार ग्रसित इल्लियॉ कम सक्रिय हो जाती हैं तथा भोजन करना बंद कर देती है। ये रोगित इल्लियॉ बाद में काली एवं चिपचिपी हो जाती हैं तथा पौधों से उलटी लटकी रहती हैं। इन इल्लियों के विषाणुओं से संक्रमित पौधों के अंक को भी अन्य इल्लियॉ खाती हैं, वे भी रोगित होकर मर जाती हैं।

उदाहरण :–न्यूक्लियर पॉलीहेड्रोसिस विषाणु (एन.पी.व्ही. 250 एल.ई./है.)

नियंत्रण :–चने की फल्ली भेदक, तम्बाखू इल्ली आदि।

सावधानियॉ :–जिन खेतों में जैविक कीटनाशकों का उपयोग किया गया हैं, वहॉ पर रासायनिक कीटनाशकों का छिड़काव/भुरकाव नहीं करना चाहिए। यदि रासायनिक कीटनाशक का छिड़काव आवश्यक हो जो उचित सलाह लेकर इण्डोसल्फान, जोलोन या नीमा का उपयोग समुचित मात्रा में करें। न्यूक्लियर पॉलीहेड्रोसिस वायरस (एन.पी. व्ही.) 250 इल्ली के समतुल्य घोल को 500 लीटर पानी में मिला लें। इसके बाद इसी घोल में 1250 ग्राम गुड़ मिलाकर एक हेक्टर में छिड़काव करें। जैविक कीटनाशकों का उपयोग शाम के समय करने से परिणाम अच्छे मिलते हैं।

किसानों के मित्र (प्राकृतिक जैविक) कीट

परभक्षी कीट (प्रोडेटर्स)

असेसिन बग (Assassin Bug, Bug Zelus Spp.) :–प्रायः यह चमकीले शरीर वाले होते हैं। ये इल्लियों व अन्य कीटों के शरीर को चूसकर जीवित रहते हैं।

क्रायसोपर्ला क्रेनिया :–क्रायसोपर्ला की हरी धारीदार पंखवाली मादा आकार में 2 सेंमी की होती है। यह एक–एक करके या गुच्छे में 300 से 400 डंठलदार अंडे देती है। ये अंडे पीले बाद में सफेद हो जाते हैं और फूटने से पहले काले पड़ जाते हैं। इसका जीवन चक्र 16 दिन में पूरा होता है। नर कीट 10 से 15 दिन तक जीवित रहते हैं। क्राइसोपर्ला की चार अवस्थाओं अंडा, सूंडी, प्यूपा तथा प्रौढ़ में से सूंडी अवस्था ही फसलों के लिये लाभदायक है। ये कीट सफेद मक्खी अन्य छोटे नाशीजीव अंडे एवं छोटी–छोटी इल्लियॉ खाकर फसल को सुरक्षा प्रदान करते हैं। इसकी सूंडी तेला और चेपा जैसे रस चूसक कीटों की अपरिपक्व अवस्था एवं कपास की सूंडी के अंडे व नवजात लार्वा के लिये एक सशक्त परभक्षी है। यह एक दिन में 40 व 50 माहू खा जाती है। क्रायसोपर्ला क्रेनिया के 5,000 अंडों (अंडे कार्ड पर चिपके रहते हैं) को प्रति हैक्टेयर के हिसाब से कार्ड के छोटे–छोटे टुकड़े करके फसल पर लगायें। इस मित्र कीट के बच्चे तथा प्रौढ़ चने के फली भेदक के अंडों तथा छोटी इल्लियों को खाते हैं।

किशोरी मक्खी :–किशारी मक्खियॉ (डेमसे फ्लाईस) चिउरा मक्खियों (ड्रेगन फ्लाईस) की तुलना में कमजोर लड़ाकू होती हैं। ये कई रंगों की होती हैं। इनके पंख पारदर्शी और संकरे होते हैं। इनके शिशु नम स्थान पर रहते हैं और वयस्क मक्खियॉ पौधों पर उड़ने वाले कीड़ों और भुनगों/फुदकों को अपना भोजन बनाती हैं।

होवर फ्लाई :–यह परभक्षी कीट प्रतिदिन 100 माहू कीटों को खा जाता है।

लेसविंग (Lacewing) :–यह माहू हरा मच्छर, सफेद मक्खी जैसे रस चूसक कीटों के साथ–साथ हेलियोथिस के अंडों को भी खा जाता है। ग्रीन लेसविंग के वयस्क सुंदर नाजुक हल्के हरे रंग के होते हैं। इनके पंख छत्ते की तरह होते हैं। ये छोटे समूहों में अंडे देते हैं। अंडों से लेसविंग की इल्लियॉ जिनके हसिये की तरह मुखांग होते हैं, रस चूसक और हेलियोथिस कीट के अंडों और नवजात इल्लियों को खाती हैं। लेसविंग के 1,000 अंडों या इल्लियों का प्रति एकड़ की दर से उपयोग करना चाहिये। प्रौढ़ कीट के चार चमकीले पंख होते हैं, जो पतले शरीर से जुड़े रहते हैं। यह आकार में लगभग एक इंच के होते हैं। लार्वा लंबा और चपटे शरीर वाला हाते हैं। शरीर का मध्य भाग थोड़ा चौड़ा रहता है। लार्वा को एफिडलॉयन्स (Aphidions) के नाम से जाना जाता है।

लेडी बर्ड बीटल (Lady Bird Beetles) :–यह परभक्षी कीट सूंडी व वयस्क अवस्था में कुछ रस चूसक कीटों जैसे–तेला, चेपा और माहू को अपरिपक्व अवस्था में खा जाता है। कपास की सूंडी के अंडे व नवजात लार्वा के लिये एक सशक्त परभक्षी है। एक लेडी बर्ड बीटल एक दिन में 100 माहू को खा सकती हैं। अपने पूरे जीवन चक्र में यह 1,000 से भी अधिक माहू को खा सकता है। आकार में ये 1/4 इंच के होते हैं। शारीरिक रूप से अर्द्धगोलाकार होते हैं।

इनका उपयोग नींबू, कॉफी, आम, अंगूर, अमरूद, शोभादार पौधों और अन्य फसलों में किया जा सकता है। इनका 600 से 1,000 बीटल्स प्रति एकड़ की दर से उपयोग करना चाहिये। फसल के पहले तीन माह की अवस्था के समय क्रायसोपर्ला और लेडी बर्ड बीटल बहुत अधिक संख्यॉ में पाये जाते हैं। इंडो सल्फान व फोजोलोन के अतिरिक्त अन्य सभी कीटनाशक इन परभक्षियों की संख्यॉ को कम कर देते हैं। अतः जब परभक्षियों की संख्यॉ अधिक हो तो चूसक कीटों के प्रबंध के लिये इंडोसल्फान का उपयोग करने की सलाह दी जाती है।

प्रीडेटर बग :–यह कीट सफेद मक्खी, हरा मच्छर आदि के अंडों व लार्वा को खाकर नष्ट कर देता है।

पोलीस्टेस बॉस्प (ततैया) :–हेलियोथिस तथा अन्य सूंडियों को डंक मारकर शक्तिहीन कर देती है, फिर उन्हें दूर अपने मिट्टी के खोंते में लाकर अपने बच्चों के साथ खाती है। यह आकार और रंग में विभिन्न प्रकार की होती है, परन्तु प्रायः काले और पीले रंगों में पाई जाती है।

मिरिड कीट :–इसका वयस्क कीट हरे रंग का होता है। इसके पैर काले रंग के होते हैं। प्रत्येक मिरिड कीट एक दिन में 7–10 अंडे या 1–5 फुदकों को चट कर सकता है।

मकड़ियॉ :–विभिन्न परभक्षी मकिड़यों को जैसे लंबे जबड़े वाली मकड़ियॉ, बौनी घेरा वाली मकड़ी 3–4 महीने की अवधि में एक मादा औसतन 200–800 अंडे देती है। इसके शिशु एवं वयस्क दोनों की पत्तियों और पौधों पर लगने वाली मक्खियों, फुदकों तथा विभिन्न कीटों की सूंडियों एव वयस्क नाशीजीवों को खाने वाले भुक्कड़ कीट होते हैं। एक मकड़ी दिन भर में अपने कद के अनुसार 5–15 हानिकारक कीड़े खा जाती है।

इंद्रगोप भृंग :–इंद्रगोप भृंग या सोनपंखी भौरें आमतौर पर पौधों पर रहने वाले माहों, भुनगों को अपना शिकार बनाते हैं। ये कीट दिन के समय सक्रिय रहते हैं और छोटे एवं धीरे चलने वाले कीड़ों और बाहर पड़े हुये अंडों को खाकर जीवित रहते हैं। इसके ग्रब वयस्क कीटों की तुलना में अधिक तेजी से नाशीजीवों को खाते हैं।

शाद्वल टिड्डा :–शाद्वल टिड्डे के एंटिने की लंबाई उसके शरीर से दो गुनी होने के कारण ये अन्य हानिकारक टिड्डों में अलग पहचाने जा सकते हैं। इनका चेहरा तिरछा

होता है और ये रात्रि के समय सक्रिय रहते हैं। नाशीजीवों के अंडे तने में छेद करने वाले कीड़ों और पत्तियों को क्षति पहुॅचाने वाले छोटे कीटों आदि के कीड़ों को खाकर फसल को सुरक्षित रखता है। एक टिड्डा एक दिन में तना छेदक कीटों के 3–4 अंड समूह खा जाता है।

परपोषी/परजीवी (पेरासाइट्स)

ट्राइकोग्रामा चिलोनिस :–ये परजीवी गहरे रंग के छोटे कीट होते हैं। तना छेदक एवं पती मोढ़क कीटों के अंडों से अपना भोजन प्राप्त करते हैं। इनकी मादा पोषक अंडों में 30–40 अंडे देती है। पोषक अंडों को चूसकर उन्हें मार देती है। अंत में ये अपने ऊपर आश्रित अंडों से जिंदा वयस्क कीटों के रूप में बाहर निकलते हैं। इन परजीवियों के अंडों से वयस्क बनने में 10–14 दिन लगते हैं। मादा ततैया हेलियोथिस के अंडों में सुराख बनाकर अपने अंडों को उसमें रख देती है।

इस प्रकार प्रत्येक ततैया 500 से भी अधिक हेलियोथिस को पनपने से पहले ही मार देती है। यह अधिकतर काटने/खाने वाले कीड़ों (लेपिडॉप्टेरन कीटों) जिनमें अमेरिकन सूंडी, धब्बेदार सूंडी शामिल हैकि अंडों का परपोषी है। ट्राइकोग्रामा चिलोनिस से युक्त 50,000 अंडों को प्रति हैक्टेयर के हिसाब से उपयोग करें, इस मित्र परजीवी से युक्त अंडे कागज के कार्ड पर चिपके रहते हैं जिसे 'ट्राइकोकार्ड' कहते हैं। इन अंडों से युक्त कार्ड के छोटे–छोटे टुकड़े करके एक हैक्टेयर (2.50 एकड़) क्षेत्र की फसल में जगह–जगह पर लगा दें। आवश्यकतानुसार 10 दिनों के बाद पुनः इतने (50,000 अंडे/हैक्टेयर) अंडों को कार्ड की सहायता से फसल पर छोड़ें। यह मित्र परजीवी चने के फल्ली भेदक कीट के अंडों को परजीवी युक्त मार देता है।

ऐपेटल्स, एलोइड्स, कंपोटिस :–कपास की सूंडी के लार्वा के मुख्य अंतः डिंभक (एंडो लार्व) पर परपोषी है।

गलत है खेत में कचरा जलाना

हमारी परंपरागत खेती में आज भी किसान भाई ऐसे उपायों को अपनाते हैं जो वैज्ञानिक दृष्टि से ठीक नहीं हैं। हालांकि समय के साथ साथ किसानों ने वैज्ञानिकों की बातों का अनुसरण भी किया है और स्वयं नई तकनीकों का आविष्कार कर लगातार खेती के कामकाज को आधुनिक भी बनाया है लेकिन गॉव के ज्यादातर किसान आज भी शार्ट कट अपनाने की मनोवृत्ति के शिकार हैं जिसे हम प्रगति के पैमाने पर सही नहीं कह सकते। यदि किसान लोग ऐसे शीघ्र किंतु हानिकारक उपायों से स्वयं को बचाएॅ तो न सिर्फ उनके मुनाफे में बढ़ोतरी होगी बल्कि उनसे पास उपलब्ध मिट्टी पानी जैसे अमूल्य संसाधनों के साथ हो रही ज्यादती भी रोकी जा सकेगी। यह एक सुखद भविष्य के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

हम बात करें फिलहाल हो रही गेहूॅ कटाई की। इस समय यह कृषि कार्य जोरों पर है। हर किसी को नकद आमदनी और पोषण देने वाली इस फसल को समय रहते

समेट लेने की चिंता है जो कि स्वाभाविक भी है। गेहूँ को काटकर साफ कर फिर बोरियों में भरने तक हर किसान सचेत हैं। लेकिन क्या वह पीछे छूट गए खेतों के लिए भी उतने ही फिक्रमंद है ? बसों में सफर करते हुए या रेलगाड़ी से बाहर झॉकने पर यह आमतौर पर देखने को मिल जाता है कि गेहूँ की कटाई के बाद बाकी बचे कचरे को किसान भाई बेरहमी से आग लगाकर जला देते हैं। जबकि ऐसा नहीं होना चाहिये। ऐसी बात भी नहीं है कि हर किसान यह करता है लेकिन यह सच है कि ज्यादातर ऐसा कर रहे हैं। वैज्ञानिकों को हम अक्सर यह कहते सुनते हैं कि खेतों के अवशेष अच्छे जैविक खाद बनाने में उपयोग लिए जाने चाहिए न कि इस तरह जला दिए जाने चाहिए। जब किसान भाई अपने खेतों में आग लगाते हैं तो एक तो पर्यावरण में दूषित गैसों का फैलना प्रारंभ होता है और दूसरा आसपास का ताप एकदम से बढ़ता है जो कि सही नहीं कहा जा सकता। हो सकता है कि इस ताप की ऑच मानव शरीर के साथ ही हमारे पशुओं को भी बेचैन करती हो। लेकिन किसान महज इसलिए यह कचरा जलाने को तैयार हो जाते है कि उन्हें इसकी सफाई के लिए मजदूरी न देना पड़ी।

इस थोड़ी सी बचत के चक्कर में पर्यावरण प्रदूषण का खतरा वे मोल लेते हैं साथ ही मिट्टी और पानी की सेहत से भी खिलवाड़ करते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार मिट्टी एक प्रकार का सजीव माध्यम है जिसमें लाखों की संख्यॉ में सूक्ष्म जीव निवास करते हैं। आग लगा देने से वे सूक्ष्म जीव नष्ट हो जाते हैं। कृषि के हानिकारक ही नहीं लाभदायक जीव भी इस आग से नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार जो जीव हमारे मित्र हैं उन्हें हम अकारण ही क्षति पहुँचा रहे हैं। इन जीवों में रायजोबियम, एकजोस्पारोलिस आदि प्रमुख है जो वातावरण से नाइट्रोजन आदि महत्वपूर्ण पोषक तत्वों को जमीन में स्थिर करते हैं और जमीन में जम चुके फॉस्फोरस जैसे पोषक तत्वों का वहॉ से मुक्त कर पौधों के लिए उपलब्ध करते हैं।

दूसरा बड़ा नुकसान मिट्टी की नीची तह में उपलब्ध नमी के भाप बनकर उड़ जाने का होता है। आजकल पानी की कमी के बारे में बताना आवश्यक नहीं है क्योंकि हर कोई इस समस्या पर पर्याप्त चर्चा करता है लेकिन यदि इस प्रकार हम आग लगाकर मिट्टी की नमी को खो देते हैं तो अंदाज लगा सकते हैं कि अगली फसल में हमें कितनी परेशानी आ सकती है। या सीधे शब्दों में कहें तो हमारा उत्पादन काफी गिर सकता है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि जलाने कि जलाने की बजाए इस कचरे को खाद बनाने के लिए काम लेना चाहिए या फिर खेत में ही इसे मिला देना चाहिए। यह काम थोड़ा खर्चीला अवश्य दिखाई देता है लेकिन इसका भविष्य में अच्छा लाभ मिलेगा। एक तो हम पर्यावरण को खराब करने के गुनाह से बचेंगे दूसरी ओर अच्छी जैविक खाद प्राप्त होने से हमारी अगली फसल का उत्पादन बिना रासायनिक खाद का खर्च किए भी हमें मिल जाएगा। मिट्टी की नमी बचा लेंगे तो फिर हमें पलवार लगाने जैसे अन्य अतिरिक्त खर्च करने की आवश्यकता भी नहीं पड़ेगी।

कहने का मतलब यही है कि यदि कल की चिंता आज की जाए तो कल नुकसान से बचा जा सकता है। आजकल हारवेस्टर मशीनों से कटाई होने के कारण

किसान जल्द ही अपने खेतों से फारिंग हो जाते हैं। लेकिन इसका यह मतलब नहीं होना चाहिए कि पीछे छूट गए खेतों की सेहत की हम परवाह न करें।

जैविक उत्पादन बाबत् म0प्र0राज्य जैविक प्रमाणीकरण संस्था द्वारा निर्धारित आंतरिक मानक

स्पांतरण अवधि –

जैविक प्रबंधन प्रणाली की स्थापना तथा मृदा उर्वरता के निर्माण हेतु एक अंतरिम अवधि की आवश्यकता होती है, जिसे रूपान्तरण अवधि कहते है, जो जैविक प्रबंध की शुरूआत एवं प्रमाणीकरण के बीच की अवधि होती है।

रूपान्तरण अवधि संबंधी मानक

समस्त मानक आवश्यकताओं का रूपान्तरण अवधि के भीतर पूरा किया जायेगा। प्रारंभ की तिथि सुनिश्चित करने की दो परिस्थितियॉ हो सकती हैः–

- पहली परिस्थिति के अनुसार यदि उत्पउदक पिछले कई वर्षो से राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप जैविक खेती कर रहा है तो यह सुनिश्चित होने पर ऐसे प्रकरण में रूपान्तरण अवधि के प्रारम्भ की गणना जैविक प्रमाणकीरण संस्था में आवेदन करने के दिनांक से की जायेगी।
- दूसरी परिस्थिति के अनुसार यदि उत्पादक (प्रतिबंधित निषिद्ध) आदानों का प्रयोग करता रहा है, एवं उसने जैविक प्रमाणीकरण संस्था में आवेदन प्रस्तुत किया है तो ऐसे प्रकरण में रूपान्तरण अवधि के प्रारंभ कीग णना निषिद्ध आदानों के प्रयोग की अंतिम तिथि से की जायेगी, बशर्ते यह सुनिश्चित हो सके कि उसके द्वारा मानकों की अहर्ताओं का पालन किया जाता रहा है। रूपांतरण अवधि बारहमासि फसलों के उत्पादन बाबत् सैद्वांतिक तौर पर तीन वर्ष एवं अन्य फसलों के उत्पादन बाबत् दो वर्षो की होगी।
- पूर्व के भूमि उपयोग के ऑकड़ो, आवश्यक साक्ष्यों, पर्यावरण की स्थिति का आंकलन करने पर यदि यह सुनिश्चित होता है कि उक्त भूमि में Unapproved/Prohibited inputs का प्रयोग बिल्कुल भी नही हुआ है एवं उक्त भूमि में समस्त मानकों का पालन पूर्व के कई वर्षो से किया जाता रहा है, तो उक्त रूपान्तरण अवधि को कम(तीन वर्ष से कम) भी किया जा सकता है, किन्तु किसी भी स्थिति में उक्त अवधि एक वर्ष से कम नही की जा सकेगी। दूसरी ओर भूमि का पिछला उपयोग अत्याधिक रासायनिक प्रदूषित प्र्यावरण में किया

जाता रहा है, तो रूपान्तरण अवधि बढाई (तीन वर्षो से अधिक) भी जा सकती है।

- रूपान्तरण अवधि के दौरान Unapproved/Prohibited inputs (आदानों) का प्रयोग यदि भूलवश भी हो जाता है।, तो रूपान्तरण अवधि की गणना इस तिथि से पुनः प्रारम्भ हो जायेगी। इस प्रकार रूपान्तरण अवधि पुनः बढ़ जायेगी।
  - यदि प्रक्षेत्र में जैविक उत्पादन के साथ–साथ अजैविक (Conversion) उत्पादन भी किया जा रहा है, तो दोनों प्रकार के उत्पादनों को स्पष्ट तौर पर बफर जोन अथवा प्राकृतिक अवरोध /ट्रैंच के माध्यम से विभाजित किया जायेगा। बफर जोन फसल की एक पट्ट (Strip) होती है, (जिसकी चौड़ाई सामान्य तौर पर 10 मी. रखी जायेगी, किन्तु दोनों प्रकार के उत्पादन(जैविक एवं पारंपरिक) को विभाजित रूप में स्पष्ट तोर पर दर्शाने के उद्देश्य से इसकी चौडाई परिस्थितिवश 10 मी. से कम अथवा अधिक भी की जा सकती है।
  - बफर जोन में वह फसल लगाना होगी, जो कि जैविक एवं अजैविक क्षेत्र में बोई गई फसल से भिन्न हो।
  - ऐसे पारंपरिक, जैविक रूपसन्तरणाधीन तथा/अथवा जैविक फसलों या पशु उत्पादों के समकालीन उत्पादन को अनुमति प्रदान नही की जा सकेगी, जिनकी एक दूसरे से स्पष्ट पहचान नहीं की जा सकती हो।
  - रूपान्तरित भूमि एवं पशुओं को जैविक तथा पारंपरिक(अजैविक) प्रबंध के बीच में परिवर्तन करते रहने की अनुमति कदापि नहीं दी जा सकेगी।
  - यदि जैविक उत्पादन उपेक्षाकृत निचले(ढालू)खेत में किया जा राह है, जिसमें अपेक्षाकृत ऊॅचे पारंपरिक खेती वाले खेतों से वर्षा का पानी रन ऑफ के रूप में बहकर आता है तो ऐसे रन ऑफ को जैविक खेत में घुसने के पूर्व ही डायवर्सन ड्रेन/ट्रेन्च के माध्यम से अन्यंत्र डायवर्ट करना होगा। ताकि उसके रन ऑफ के द्वारा जैविक खेत में प्रदूषण न फैला सकें।

फसल उत्पादन संबंधी मानक (एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.2.1 के अनुसार)

- फसल उत्पादन बाबत खेत की तैयारी के दौरान भी किसी भी रसायन का प्रयोग बर्जित है।
- प्रमाणित जैविक बीज तथा वानस्पतिक सामग्री या जैविक बीज तथा वानस्पतिक सामग्री के प्रयोग को प्राथमिकता दी जायेगी। यदि उक्त सामग्री उपलब्ध नहीं है तो ऐसा बीज तथा वानस्पतिक सामग्री उपयोग में लाई जा सकती है जो कीट एवं व्याधि प्रतिरोधक हो एवं रासायनिक रूप से उपचारित न की गई हो।
- बीज एवं वानस्पतिक सामग्री को स्वीकृत **(Approved)** किये गये जैविक

आदानों (ट्रायकोडर्मा आदि) द्वारा अथवा खेत पर ही पारंपरिक/प्राकृतिक संसाधनों से तैयार किये गये जैविक आदानों द्वारा उपचारित किया जा सकता है, बशर्ते उनसे किसी प्रकार का रासायनिक प्रदूषण नही फैलता हो।

- अनुवांशिक रूप से तैयार किये **(Genetically Modified)** बीज एवं वानस्पतिक सामग्री का प्रयोग वर्जित है।
- उत्पादन को उसके चाहे जाने पर रूपान्तरण अवधि के दौरान जैविक उत्पदों को **''रूपान्तरण की प्रकियाधीन जैविक खेती की उपज''** के रूप में बेचे जाने की अनुमति प्रमाणीकरण कार्यक्रम के अंतग्रत प्रदान की जा सकती है।
- जैविक प्रबन्धन के प्रथम वर्ष के दौरान फार्म यूनिट में पैदा किये गये चारे को जैविक के रूप से वर्गीकृत किया जा सकता है। इसका तात्पर्य केवल ऐसे पशुओं के चारे से है, जिनका पालन पोषण फार्म यूनिट के भीतर ही किया जा रहा हो, तथा ऐसे चारे को जैविक के रूप में बेचा नहीं जा सकता है। राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप फार्मों में पैदा किये चारे को वरीयता दी जायेगी।
-

फसल उत्पादन में विविधत संबंधी मानक (एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.2.3 के अनुसार)

खेतों की मिट्टी की संरचना, स्वास्थ्य उर्वरा शक्ति,जैविक तत्वों आदि को मेनटेन रखने,फसलों पर कीट–व्याधि,खरपतवार, रोगों का प्रकोप कम से कम करने के उद्देश्य से निम्नानुसार मानक तय किये जाते हैः–

- कीट व्याधि एवं रोग प्रतिरोधक प्रजाजियों का चयन किया जायेगा।
- फसल चक्र में लैग्युमिनस फसलों(मूंग, उड़द,सोयाबीन आदि) को अवश्य शामिल किया जायेगा।

उर्वरण नीति संबंधी मानक(एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.2.4 के अनुसार)

- उर्वरण कार्यक्रम जीवाणु,वनस्पति अथवा पशुमूल की जैविक रूप से नष्ट की जा सकने वाली सामग्री के ऊपर आधारित होना चाहिए।
- नाइट्रोजन युक्त सिन्थेटिक उर्वरक जैसे यूरिया आदि का प्रयोग वर्जित है।
- नाईट्रोजन की कमी को पूरा करने के उद्देश्य से हरी खाद (सन,ढैंचा) को खरीफ में लिया जाना चाहिए। इसको लेते समय यह विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि रबी की फसल,बोने के पर्याप्त पहले ही इसे खेतों में पलट दिया जाये, ताकि इसे डिकम्पोज होने के लिये पर्याप्त समय मिल जाये।
- मानव अवशिष्ट (मल तथा मूत्र) से युक्त खाद का प्रयोग वर्जित है।

- खेत में पर्याप्त जैविक खाद डाला जाये ताकि मिट्टी की संरचना,उर्वरता एवं स्वास्थ्य मेनटेन (Maintain) रह सके। यहॉ स्वयं के खेत पर निर्मित जैविक खद आदानों की वरीयता दी जायेगी। दूसरे के खेत में तैयार जैविक खादआदान तभी प्रयोग किये जा सकेगी, जब यह सुनिश्चित होगा कि उक्त फार्म में भी मानकों के अनुरूप फसल एवं पशु प्रबंधन किया गया है।
- आयतित किये गये वे ही जैविक आदान प्रयोग करने की अनुमति दी जा सकेगी, जो अधिमान्यता प्राप्त संस्थाओं द्वारा प्रमाणित हो।
- नाडैप खाद बनाने के दौदान परिपक्व होते समय फॉस्फोरस तत्व की मात्रा बढाने के उद्देश्य सेरॉक फॉस्फेट का प्रयोग (प्राकृतिक अवस्था में) किया जा सकता है।
- खनिज उर्वरका का कार्बन आधारित सामग्रियों के साथ केवल एक संपूरक (Supplymentary) भूमिका के रूप में प्रयोग किया जा सकेगा। प्रयोग की अनुमति केवल उसी स्थिति में दी जायेगी जबकि अन्य उर्वरता प्रबंधन पद्धतियों का प्रयोग किया जा चुका हो।
- खनिज उर्वरकों को उनके प्राकृतिक संगठन में ही प्रयोग किया जायेगा एवं रासायनिक शोधन के द्वारा उनको अधिक विलयनशील नही बनाया जायेगा। मात्र अपवादिक परिस्थितियों में ही इसके प्रयोग की अनुमति तभी प्रदान की जा सकती है, जहॉ ऐसा करना औचित्यपूर्ण सिद्ध हो।
- ऐसे खनिज उर्वरक,सूक्ष्म तत्व जिनमें सापेक्षिक रूप से उच्च भारी धातु अंश(आर्सेनिक,लैड आदि) अन्य अवांछित पदार्थ(बेसिक स्लैग,रॉक फॉस्फेट एवं सीवेज) उपस्थित हो प्रयोग नही किये जा सकेगें।
- आयतित सामग्री अनुमोदित होना चाहिए।
-

कीट,रोग तथा वृद्धि विनियामकों सहित खरपतवार प्रबंध
(एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.2.5 के अनुसार)

- स्थानीय पौधों (बेशरम,सीताफल के बीज, नीम आदि) पशुओं (गौमूत्र, मट्ठा आदि) तथा सूक्ष्म जीवों के द्वारा फार्म पर तैयार किये गये फर्मन्टेड (Fermented) उत्पादों को कीट, रोगों तथा खरपतवार प्रबंधन हेतु प्रयो किया जा सकता है।
- स्थानीय या सूची में दर्शाये अवयवों से निर्मित कोई भी उत्पाद जो कीट व्याधि, रोगोपचार आदि के लिये तैयार किया गया हो,के अतिरिक्त अन्य कोई भी उत्पाद का उपयोग म.प्र.रा.जै. प्र.सं.द्वारा अनुमोदन के बिना नही किया जा सकता है। संस्था NSOP के दायरे में ही, आवश्यक/संभव हुआ तो, तदानुसार अनुमोदन के प्रयोग नहीं किए जा सकेगें।

- कीट,रोग तथा खरपतवार प्रबंधन हेतु भौतिक विधियॉ उपयोग में लाई जायेगी।
- पारंपरिक कृषि प्रणालियों के सभी उपकरणों को जैविक प्रबंधन कार्यक्रम में प्रयोग के पूर्व अच्छी तरह से साफ एवं अवशेष मुक्त करना आवश्यक है।
- कृत्रिम शाकनाशकों (Herbicides) ,फफूंदनाशकों, कृमि नाशकों तथा अन्य कीट नाशकों का प्रयोग वर्जित है।
- कृत्रिम वृद्धि नियामकों (Growth regulators) तथा कृत्रिम रंगों का प्रयोग वर्जित है।
- अनुवांशिक रूप से (Genetically Engineered) निमित्त किए गये जीवों तथा उत्पादों का प्रयोग वर्जित है।
- जैविक उतपाद के थोक भण्डार गृहो को पारंपरिक उत्पादों के भण्डार गृहो से अलग रखना चाहिए तथा इस आशय हेतु जैविक उत्पादों के रूप में स्पष्ट तौर पर लेबल किया जाना चाहिए जिससे उन्हें आसानी से पहचाना जा सकें।
- जैविक उत्पाद भण्डारण एवं परिवहन सामग्रियों को ऐसी विधियों तथा सामग्रियों का प्रयोग करक साफ करना चाहिये जिनकी जैविक उत्पादन में अनुमति प्रदान की गई है।
- जैविक एवं अजैविक उत्पादों का परिवहन भी अलग–अलग करना चाहिए।
- यदि परिवहन साधन द्वारा अजैविक उत्पाद या रासायनिक आदानों आदि का परिवहन हो चुका हो तो जैविक उतपादन के परिवहन के साधन को उचित सामग्री से साफ करना सुनिश्चित करना होगा, ताकि किसी भी प्रकार का कोई अवशेष जैविक उत्पाद को प्रदूषित न कर सके।
-

<u>पशुपालन संबंधी आंतरिक मानक(एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.3 के अनुसार)</u>
<u>पशुपालन प्रबंधन संबंधी मानक(एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 33.1 के अनुसार)</u>

- पशु वातावरण का प्रबंधन पशुओं की व्यवरात्मक आवश्यकताओं (Behavioural Needs) का पूरा पूरा ध्यान रखना होगा। निम्न बातों का निश्चित करें।
- स्वतंत्र विचरण (Free Movement)
- पशुओं को पूर्ण ताजी हवा तथा दिन में नैसर्गिक प्रकाश
- पशुओं को आवश्यकता अनुसार ताजे पानी तथा चारे उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

- पशुओं को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार पर्याप्त जगह उपलब्ध करानी चाहिए। (विश्राम तथा लेटने के लिये)
- पशुओं को उनकी प्रजातियों की जैविक तथा जातीय स्वाभाविक आवश्यकताओं के अनुसार सुविधाएं प्रदान की जानी चाहिए।
- उत्पादन उपकरण एवं निर्माण सामग्रियों हेतु ऐसी यौगिक का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए जो कि मनुष्य अथवा पशु के स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक हो।
- सभी पशुओं को उनकी आयु तथा अवस्था के अनुसार खुली हवा, चराई एवं अन्य सुविधाओं तक पहुॅच प्रदान की जानी चाहिए।
- झुण्ड में रखे जाने वाले प्शुओं को अकेला नहीं रखा जाना चाहिए।

रूपांतरण संबंधी (Conversion Period) मानक(एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.3.2 के अनुसार)

- पशु उत्पादों को जैविक उत्पाद खेती के रूप में केवल उसी स्थिति में बेचा जा सकता है जब प्शु फार्म अथवा उसका संबंधित भाग कम से कम 12 महिने रूपांतरण अवधि में रहा हो और इस रूपांतरण समय के दौरान जैविक पशु उतपादन मानको का पालन किया जाता रहा हो।

संदूषण नियंत्रण (Contamination Control) संबंधी मानक (एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.2.6 के अनुसार)

- प्रत्येक प्रकार का संदूषण(रासायनिक, प्र्यावरणी, मानवीय लापरवाही द्वारा आदि) का जैविक उत्पादन कार्यक्रम से दूर रखना होगा। संदूषण का युक्तिसंगत् संदेह होने की दशा में संदूषण का स्तर निर्धारित करने हेतु प्रदूषण के संभावित श्रोतों(मिट्टी एवं जल) की जॉच कराना होगी।
- ढॉकने के लिए, कृमि जाल बनाने के लिए, साइलेज लपेटकर पैक करने के लिए केवल पोलीइथिलीन तथा पोली प्रोपाइलीन अथवा अन्य पोलीकाबोनेट्स पर आधारित उतपादों का प्रयोग किया जा सकता है। उपयोग के पश्चात् इनको मृदा से अलग हटाना होगा एवं कृषि भूमि पर इनको जलाया नही जायेगा, पोलीक्लोराइड आधारित उत्पादों का प्रयोग वर्जित है।
- झीलों/तालाबों आदि की सिल्ट भी खेतों की मिट्टी के साथ नहीं किया जा सकेगा।

मृदा एवं जल संरक्षण(एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.2.7 के अनुसार)

- जैविक पदार्थ को जलाने, कटाई उपरान्त ढूॅट(डंठल) तथा भूसा(Straw) आदि को जलाने की अनुमति नहीं होगी।

- प्राथमिक/आदिम जंगल (Primary Forest) को साफ करना वर्जित है।
- मिट्टी का क्षरण रोकने बाबत् आवश्यकतानुसार उचित अपनाये जाने चाहिए।
- जल संसाधनों के अत्यधिक दोहन की अनुमति नहीं दी जायेगी।
- मृदा को लवणीय न होने के उद्देश्य से फलड इरीगेशन को बढावा नहीं दिया जाना चाहिये।

पैकेजिंग (एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.4.5 के अनुसार)

- पैकेजिंग हेतु प्रयोग में लाई जाने वाली सामग्री पर्यावरण अनुकूल तथा (Food Grade) होनी चाहिए।
- पी.वी.सी. सामग्रियों का प्रयोग निषिद्ध है।
- लेमिनेट्स एवं एल्यूमिनियम का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- जैविक रूप से नष्ट होने वाली पैकिंग सामग्रियों का प्रयोग करना चाहिये।
- मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाली सामग्री से बचना चाहिए।

भण्डारण एवं परिवहन (एन.एस.ओ.पी.भाग संख्या 3.6 के अनुसार)

- जैविक एवं अजैविक उत्पादों को अनिवार्य तौर पर प्र्याप्त दूरी पर भौतिक रूप से अलग–अलग रखना चाहिए एवं यह सुनिश्चित करना चाहिये कि अजैविक उत्पादों से किसी प्रकार का संदूषण जैविक उत्पादनों को न हो।
- प्रमाणीकरण (Certification) कार्यक्रम द्वारा समय की उस लंबाई का विनिर्दिष्ट (Specify) किया जायेगा जिसमें पशु उत्पादन मानकों (Standard) को पूरा किया जा सकें। डेयरी तथा अण्डा उत्पादन संबंध में यह अवधि (Conversion Period) 30 दिनों से कम नहीं होगी।
- यदि जैविक मानकों (Organic Standardsa) को 12 महीनों (एक वर्ष) तक पूरा किया जाता रहा हो तो रूपांतरण (Conversion) के समय फार्म पर उपसिति पशुओं को जैविक मास (Organic Meat) के रूप में बेचा जा सकता है।

//अदरक की खेती व भण्डारण//

अदरक औषधीय गुणवत्ता के लिए जाना जाता है। यह विभिन्न प्रकार के व्यंजनों, पेय पदार्थों व औषधियों में प्रयोग किया जाता है। हमारे देश में अदरक को 1,49,100 हैक्टेयर भूमि में उगाया जाता है जिससे इसका 7,02,000 मीट्रिक टन उत्पादन होता है। अदरक की उत्पादकता 4.70 टन प्रति हैक्टेयर है लेकिन यह उत्पादकता चीन, नेपाल, थाईलैंड तथा कोरिया गणराज्य की तुलना में बहुत कम है। इस मसाला फसल की काश्त केरल में बड़े पैमाने पर की जाती है। भारत में अदरक की खेती केरल, मेघालय, अरूणाचल प्रदेश, सिक्किम, मिजोरम, मणिपुर, त्रिपुरा, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, असम, उत्तराखंड, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में की जाती है। भारतवर्ष में पैदा होने वाले अदरक का निर्यात मुख्य रूप से जर्मनी, अमेरिका, अरब, फ्रांस व इंग्लैंड के देशों को किया जाता है।

हिमाचल प्रदेश के दस जिलों में अदरक की खेती सफलतापूर्वक की जा रही है। इस प्रदेश की 3500 हैक्टेयर भूमि में 50,000 मीट्रिक टन अदरक का उत्पादन होता है। सबसे अधिक अदरक का क्षेत्र व उत्पादन सिरमोर जिले में है। हिमाचल प्रदेश में अदरक का उत्पादन सिरमौर, सोलन, शिमला, बिलासपुर, मंडी व कांगड़ा जिलों में किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों में अदरक का क्षेत्र एवं उत्पादन में कमी आई है। इसका मुख्य कारण है अदरक बीज की कमी, अदरक बीज का महंगा होना, गली सड़ी गोबर खाद की कमी, फसल चक्र का न होना, अदरक में लगने वाले कीट एवं रोग तथा उपयुक्त भण्डारण व्यवस्था का न होना व छोटे आकार के जोत इत्यादि। इसके अतिरिक्त किसानों का सब्जियों में रूझान बढ़ गया है क्योंकि सब्जियों से कम समय में अत्यधिक लाभ मिलता है। अदरक एक लम्बी अवधि वाली फसल है तथा लगभग आठ माह तक खेतों में उगाई जा सकती है।

जलवायु :–अदरक की खेती भारतवर्ष में समुद्र तल से 1500 मी. की ऊँचाई तक की जाती है। अदरक खेती के लिए मौसम गर्म तथा नमीयुक्त होना चाहिए। अदरक फलाव में हल्की वर्षा का समय–समय पर बरसना लाभकारी पाया गया है। हिमाचल प्रदेश में इस तरह का मौसम प्रायः उपयुक्त पाया जाता है। सूखा पड़ने पर अदरक को समय–समय पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

भूमि की तैयारी :–अदरक की फसल के लिए खेत की तैयारी बहुत आवश्यक है। खेत की पहली जोताई मिट्टी पलटने वाले गहरे हल से करनी चाहिए। इसके बाद 3–4 जोताई देसी हल से करनी चाहिए। हल जोताई के बाद सोहागा लगाएँ ताकि ढेले टूट जाएँ। खेत को तैयार करते समय 200–300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर गोबर की सड़ी खाद का प्रयोग करें। गली–सड़ी गोबर खाद भूमि की उपजाऊ क्षमता बढ़ाने के लिए बहुत ही उपयुक्त पाई गई है। यह खाद भूमि का सुधार, तापमान बनाये रखने के लिए तथा अन्य मुख्य व सूक्ष्म तत्वों को जमीन से उपलब्ध करवाने में सहायता करती है। यह पौधों की वनस्पातिक फलाव व अन्य कई क्रियाओं में सहायता करती है।

स्वस्थ बीज :–अदरक की स्वस्थ खेती के लिए स्वस्थ बीज की आवश्यकता होती है। अदरक बीज स्वस्थ होना चाहिए, अतः अदरक के अंकुर स्वस्थ तथा हल्के गुलाबी होने चाहिए। अंकुर में किसी किस्म का पीलापन या काला रंग न हो। अदरक काटने पर अन्दर से पीला व दागी नहीं होना चाहिए। कई बार यह देखा गया है कि अदरक में अन्दर से दाग होते हैं। इस प्रकार के दाग सूत्रकूमि द्वारा उत्पन्न होते हैं। कई बार अदरक के अन्दर के भाग से दूधिया पानी निकलता है जो कि जीवाणु रोग के लक्षण होते हैं। अदरक में पीलापन का कारण रोग के अतिरिक्त कीट भी हो सकता है जिसके कारण पौधे के अन्दर के भाग खोखले होने के पश्चात् पत्तों को पीला कर देते हैं। हिमाचल प्रदेश के मध्य पर्वतीय क्षेत्रों में मोटी गट्ठियों वाली किस्म जिसमें रेशा काफी मात्रा में होता है, उगाई जाती है। इन प्रजातियों में हिमगिरी अधिक पैदावार देने वाली किस्म है जिसमें गट्ठी रोग कम मात्रा में लगता है। निचले पर्वतीय क्षेत्रों में जैसे चांदनी (सिरमौर) अदरक की छोटी किस्में लगाई जाती हैं इसलिए इसकी अदरक मात्रा कम होती है। अन्य प्रान्तों की अधिक पैदावार देने वाली किस्में जैसे नादिया, मैरान, आसाम, सुरभी, सुरूचि, सुप्रभा, वरधा, महिमा, रेजत्था, बर्द्धवान, नरसापैटम, टैफनजीवा, तूरा व बायानाईड इत्यादि है।

मिट्टी :–अदरक बीज उगाने के लिए मिट्टी भुरभुरी रेतीली दोमट या चिकनी दोमट जिसमें कार्बन अधिक मात्रा में हो, का चुनाव करना चाहिए। इस मिट्टी में 25 क्विंटल प्रति बीघा गला सड़ा गोबर डाले। बुवाई के समय खेतों की क्यारियों में ट्राईकोडर्मा (2. 5 किलो प्रति 50 किलो गोबर प्रति हैक्टेयर) का प्रयोग करें।

बिछौना :–अदरक बीजाई के बाद मिट्टी के ऊपर 150 क्विंटल प्रति बीघा अच्छा गोबर (काला व 75 प्रतिशत नमी) डाले। इससे पहले सूखे पत्ते चार क्विंटल प्रति बीघा बुवाई के पश्चात् खेतों में डाले।

बिजाई का समय :–हिमाचल प्रदेश में बिजाई का समय निचले पर्वतीय क्षेत्रों में मध्य जून तथा मध्य पर्वतीय क्षेत्रों में अप्रैल–मई है। लेकिन यह समय स्थान व जलवायु अनुसार बदला जा सकता है।

बीज मात्रा व फासला :–अदरक बीज की मात्रा 150–200 किलो प्रति बीघा के हिसाब से बुवाई करें। एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिए 18–22 क्विंटल बीज की आवश्यकता होती है। पंक्ति से पंक्ति तथा बीज से बीज की दूरी 30 व 20 सै.मी. होनी चाहिए। बुवाई से पहले स्वस्थ बीज की टुकड़ियॉ कर लें। इस बीज का उपचार मैन्कोजैब (2.50 ग्राम प्रति लीटर पानी) से करें। उपचार के पश्चात् बीज को छाया में सुखाये। जिन किसानों ने जैविक खेती का आरम्भ किया है, वे अदरक बीज का उपचार गर्म पानी (450 से 470 सेल्सियस) में आधा घंटे के लिए करें। इसके पश्चात् अदरक बीज को एक माह पुराने गौ मूत्र काढ़े (गौ मूत्र 2.5 लीटर, डरेक बीज 2.5 किलो, लहसुन1.0 किलो, सफेदा पत्तियॉ 250 ग्राम व साफ पानी 2.5 लीटर) के घोल से भी उपचार कर सकते हैं। अदरक को उपचार के पश्चात् छाया में अवश्य सुखायें।

मिट्टी जॉच :–अदरक जमीन से आवश्यक तत्व अधिक मात्रा में लेता है इसलिए मिट्टी जॉच अनिवार्य है। इसके लिए खुरपे या औगर से 10–15 स्थान से मिट्टी का नमूना लें। इसके लिए 'अ' आकार का गड्डा 10–15 स्थान पर बनायें और इनकी

सतह से एक इंच मिट्टी खरोंच कर इकट्ठा करें और बाद में सभी मिट्टी नमूने को इकट्ठा कर एक आधा किलो का नमूना जॉच के लिए प्रयोगशाला में भेजें। अदरक मिट्टी से अधिक मात्रा में पोषक तत्व लेता है इसके लिए पोषक तत्वों की जॉच अनिवार्य है। अदरक के लिए यूरिया का प्रयोग निराई गोड़ाई के पश्चात् व वर्षा या सिंचाई पश्चात् पौधे के साथ लगने वाली मिट्टी में करें।

जल निकास :–खेतों में जल निकास के लिए नालिया अवश्य बनायें जिससे बरसात में अत्यधिक पानी खेतों में खड़ा न रहे और खड़े पानी का निकास करें।

रोग व कीट के खिलाफ उपचार :–जब पौधे 10–15 से.मी. के हो जाएँ तो यह ध्यान रहे कि इन पर किसी किस्म के रोग के लक्षण नजर न आयें और किसी किस्म के कीड़ों का आक्रमण न हो। इसके लिए पौधों पर मैन्कोजैब (250 ग्राम) तथा नीमगोल्ड (500 मि.ली.) प्रति 100 लीटर पानी के घोल से 15–20 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करते रहे। इसके अतिरिक्त एक माह पुराने गौ मूत्र जनस्पति काढ़े के घोल को प्रभावित मिट्टी पर छिड़काव भी कर सकते हैं।

दवाईयों का छिड़काव :–अदरक के पत्तों पर मैन्कोजैब (250 ग्राम) तथा नीमगोल्ड (500 मी.ली.) प्रति 100 लीटर पानी के घोल का छिड़काव 15–20 दिन के अन्तराल पर करते रहें। यह छिड़काव पौधों से लगने वाली मिट्टी में भी कीट व रोग रोकथाम हेतु कर सकते हैं। यह छिड़काव रोग अवस्था तथा स्थिति देख कर ही करें। अक्टूबर माह में पत्तों के ऊपर छोटे–छोटे सफेद रंग के धब्बे दिखते हैं जिनसे पौधे तथा गटिठ्याँ छोटी रह जाती है।

सिंचाई :–समय–समय पर अदरक फसल पर सिंचाई करें। अदरक पकने से 15–20 दिन पहले सिंचाई कर दें।

गॉठों की खुदाई :–फसल पकने पर गॉठों को खुदाई कर निकालें। जड़ों तथा रोगी गॉठों को किसी गड्डे में दबा दें, जिससे रोग का फैलाव न हो।

फसल चक्र :–फसल चक्र आवश्यक है इसलिए 3–5 वर्ष का फसल चक्र अपनायें। फसल चक्र में मक्की, धान, तोरिया, बीन्स, स्ट्राबेरी, कद्दू, मोटे अनाज व दालें इत्यादि का प्रयोग करें। टमाटर, आलू, बैंगन व शिमला मिर्च में यह रोग जनक पनपते हैं इसलिए इन फसलों का चुनाव न करें।

भण्डारण :–अदरक के रखरखाव के लिए दिसम्बर माह के अन्त में पहले 10 दिन अदरक को किसी ठंडे कमरे में रखें जिससे अदरक के ऊपर की छाल पक जाए। जनवरी माह में स्वस्थ अदरक बीज का भण्डारण पहले छोटी खंतियों में करे, 1 मी. की 3 खंतियों में 75 किलो अदरक का भण्डारण किया जा सकता है। खंतियों के नीचे 10–15 से.मी. रेत की मोटी तह बिछाएँ। अदरक को रेत की तह के ऊपर रखें। भण्डारण से पहले अदरक उपचार मैन्कोजैब (0.25:) नीमगोल्ड (0.5:) दवाईयों में करें। खंतियों का बराबर भाग अदरक से भरें इसके ऊपर घास की तह बिछाएँ। अदरक को ऊपर से लकड़ी के तख्तों से ढक दें। लकड़ी के तख्तों में 2–3 प्रतिशत छिद्रित भाग खुला रखें। भण्डारण के समय 12–130 सैल्सियस तापमान तथा 75–80 प्रतिशत नमी होनी चाहिए। कार्बन डाईऑक्साईड निकलने के लिए प्लास्टिक की 2–3 छिद्रित नालियॉ खंतियों में अदरक अनुपात का ध्यान रखते हुए करें। फरवरी माह के आखिरी

सप्ताह में अदरक को खंतियों से निकाल कर किसी ठंडे कमरे में दीवार के साथ रेत की तह के ऊपर रखें। अदरक के ऊपर सूखे घास व टाट के टुकड़ों का प्रयोग कर ढक दें। इस प्रकार अदरक का भण्डारण 3–4 माह तक आसानी से किया जा सकता है। भण्डारण के समय अदरक बीज की मॉच 3–4 बार अवश्य करें। यदि भण्डारण के समय अदरक में रोगी गॉठे दिखें तो इन्हें छांट कर गड्डे में दबाएँ। केवल साफ व स्वस्थ अदरक का ही भण्डारण करें।

अदरक के सूखे पदार्थ :–अदरक 8–9 माह पश्चात् पूर्ण रूप से पक जाती है और उसमें सुगंध, तीखापन व स्वाद अधिक होता है जिसे सौंठ के लिए प्रयोग किया जाता है। मध्यम आकार के अदरक को सौंठ के लिए उपयुक्त पाया गया है। सुखाने की क्रिया को तेज करने के लिए इसे छोटे टुकड़ों में काटा जाता है। बड़े आकार के अदरक को सुखाने में दुविधा होती है। यह पाया गया है कि 100 किलो अदरक से 16–25 किलो सौंठ प्राप्त होती है तथा एक किलो अदरक से 40 एम.एल. औलियोरेजिन तैयार होता है। इसके अतिरिक्त एक किलो अदरक से 10 मि.ली. तैल तैयार किया जा सकता है। अदरक का उपयोग सब्जियों में आचार, कैंडी तथा दवाईयों में अनेक प्रकार से किया जाता है। सौंठ तैयार करने के लिए पहले अदरक को काटा जाता है और इसके पश्चात् इसके ऊपर की छाल को एक विशेष यन्त्र द्वारा निकाला जाता है तथा इसे धूप में सुखाया जाता है। इसके पश्चात् इसे छह ग्रेड में बांटा जाता है।

कुछ क्षेत्रों में सौंठ बनाने के लिए अदरक को रात भर पानी में भिगो कर रखा जाता है। इसके उपरान्त अदरक को ठीक ढंग से पानी में साफ किया जाता है जिससे इसके ऊपर किसी किस्म की मिट्टी न रहे। अदरक को पानी से निकाल कर या तो लकड़ी टोकरियों में हिलाया जाता है जिससे इसके ऊपर की छाल उतर जाए या फिर छाल उतारने वाले यंत्र में डाला जाता है और यंत्र द्वारा अदरक को अच्छी तरह से हिलाया जाता है जिससे इसके ऊपर की छाल उतर जाए। छाल निकाले हुए अदरक को साफ करने के पश्चात् 1.5–2.0 प्रतिशत चूने (कैल्शिम ऑक्साईड) में 6 घंटे के लिए डुबोया जाता है। धूप में इस अदरक को 7–14 दिनों के लिए मौसम के हिसाब से सुखाया जाता है जिससे इसमें 10 प्रतिशत नमी रह जाए इसे ब्लीच्ड अदरक कहा जाता है। काटे हुए अदरक को गर्म हवा सुखाने वाली मशीन में 5–6 घंटे तक सुखाया (60 सेल्सियस) जाता है। तैयार की हुई सौंठ को नीम के पत्तों में रखने से कीट नहीं लगता है। तैयार की हुई सौंठ को गत्तों की पेटी में इस तरह से रखा जाता है जिससे इसमें किसी किस्म की नमी व हवा प्रवेश न कर सके। बंद की हुई पेटियों के ऊपर किसान का नाम व पता, तैयार करने का समय व भार इत्यादि लिखा जाता है। इसके पश्चात् ही इस सौंठ का निर्यात किया जाता है।

भारतवर्ष में पैदा अदरक को ज्यादातर ताजा ही बेचा जाता है तथा शेष भाग को सौंठ रूप में बेचा जाता है। इसके अतिरिक्त अदरक की कम मात्रा के शेष भाग को ऑलियोरेजिन या तेल निकालने के लिए प्रयोग किया जाता है। भारत से ज्यादातर सौंठ को दूसरे देशों के लिए निर्यात किया जाता है। हिमाचल प्रदेश के निचले पहाड़ी क्षेत्रों में किसान अदरक का निर्यात सौंठ के रूप में करते हैं तथा इन्हें इससे काफी

फायदा होता है। अदरक विभिन्न प्रकार के अचार, तरल महक, अदरक लहसुन पेस्ट, जैम व पेय पदार्थ बनाने के काम आता है। अदरक का तेल और औलियोरेजिन निर्यात करने से विदेशी मुद्रा भी अर्जित कर सकते हैं।

उत्तम बीजों की विशेषताएँ एवं आवश्यकता

भौतिक शुद्धता :–बीज में संबंधित किस्म के बीजों के अतिरिक्त अन्य फसलों व खरपतवारों के बीज तथा धूल, कंकड़, मिट्टी व भूसी आदि भी सम्मिलित रहते हैं। जिसकी मात्रा अच्छे बीज में 2 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। भौतिक शुद्धता अच्छी होने से बीजों के साथ मिश्रित खरपतवारों के बीज एवं मिट्टी में उपस्थित हानिकारक जीवाणु के फैलने की आशंका नहीं होती है।

अनुवांशिक शुद्धता :–बीज की अनुवांशिक शुद्धता सही मात्रा में होना चाहिए। बीजोत्पादन के फसल में यदि दूसरी कोई किस्म मिश्रित रहती है तो दूसरे किस्म के पौधे को उखाड़ के निकाल दें। आधार बीज की अनुवांशिक शुद्धता की मात्रा 99 प्रतिशत एवं प्रमाणित बीज की मात्रा 98 प्रतिशत होनी चाहिए।

अंकुरण :–एक बीज की अंकुरण, बीज की उस क्षमता के रूप में परिभाषित किया गया है जहॉ एक बीज से एक अंकुर बनता है जो एक स्वस्थ पौधा बनने के लिए सक्षम है। नमी और ऑक्सीजन के अनुकूल हालत में, बीज से अंकुर का उत्पादन होता है जिसके सभी भागों का समान विकास होता है और जो एक स्वस्थ पौधा बना सकता है। अंकुरण क्षमता बीज का सबसे महत्वपूर्ण गुण है। अंकुरण क्षमता बीज ढेर का बुआई मान निर्धारित करता है। उच्च महत्वपूर्ण गुण है। अंकुरण क्षमता बीज ढेर का बुआई मान निर्धारित करता है। उच्च अंकुरण क्षमता वाली ढेर खेतों में अच्छी पौध संख्या आश्वस्त करता है जिससे अधिकतम उत्पादन मिलता है। सोयाबीन बीज की अंकुरण क्षमता न्यूनतम 70 प्रतिशत होना चाहिए। अंकुरण क्षमता कम होने पर प्रति वर्ग यूनिट जमीन पर पर्याप्त संख्या में पौधे नहीं रहते जिसके चलते उत्पादकता में कमी आती है। सोयाबीन का बीज काफी नाजुक होने के चलते इसकी अंकुरण क्षमता जल्द ही घट जाती है।

अंकुरण परीक्षण :–बीज अंकुरण बुआई के पहले अवश्य करें। यह 70 प्रतिशत या उससे अधिक होनी चाहिए। अंकुरण परीक्षण हेतु एक बड़े ट्रे में बालू भरकर उसमें 50 प्रतिशत तक पानी डाल कर भीगा दें। भीगे बालू में 400 सोयाबीन की बीज 2 सेंमी गहराई में बुआई करें। दो बीज के बीच दूरी 2 सेंमी एवं दो लाइन के बीच की दूरी लगभग 5 सेंमी होनी चाहिए। ध्यान रखे कि बालू सूखे ना अतः जरूरत के हिसाब से बालू में पानी के फुहार दें। 5 से 7 दिन में अंकुरित स्वस्थ पौधों को गिने। यदि 280 या उससे ज्यादा स्वस्थ पौधे अंकुरित हो गए हैं तो बीज उत्तम है। अंकुरित पौधे की सही जांच

के लिए उसे बालू से बाहर निकाले। जड़ एवं पौधे का वृद्धि को ध्यान से देखें। पौधे की वृद्धि सीधी होना चाहिए। जड़ एवं तने की वृद्धि सही एवं उचित अनुपात में होनी चाहिए।

बीज स्वास्थ्य :–रोगमुक्त बीज से ही स्वस्थ पौधे का जन्म संभव है। अधिक वर्षा एवं तापमान के कारण सोयाबीन फसल में विभिन्न रोग जैसे चारकोल रॉट, राइजोक्टोनिया एरियल ब्लाईट, एंथ्रेक्नोज, पाड ब्लाईट, बेक्टीरियल पश्चुल, पीला मोजेक वायरस, सोयाबीन मोजेक वायरस का प्रकोप देखा गया है। इन रोगों के कारण सोयबीन बीज की गुणवत्ता प्रभावित होती है। तथा इसकी अंकुरण क्षमता ह्रास होती है। इसका असर आने वाली फसल में होने की आशंका है। यदि बीज रोगकारी जीवों व कीड़ों से संक्रमित है तो उससे खेत में पादप संख्या में कमी के साथ उपज कम होगी और रोगग्रस्त पौधों के नियंत्रण हेतु रोगनाशक दवाईयों पर खर्च ज्यादा होता है।

बीज में विभिन्न रोग छिपा हो सकता है। रोगग्रस्त बीज से रोग पौधा में फैलता है बाद में संक्रमित पौधे से रोग दूसरे पौधे में फैलता है। रोगमुक्त बीज पाने के लिए रोग मुक्त बीजोत्पादन जरूरी है। फसल के बीमारी रोकने के लिए बीज उपचार से शुरू करके फसल के रोग नियंत्रण के सारे उपाय सही मात्रा में और सही समय पर प्रयोग करें।

बीज उपचार :–बीज में बीमारियों को फैलने से रोकने तथा बीज का अंकुरण स्तर बनाएं रखने के लिए बुआई से पहले बीज उपचार आवश्यक है।

मिट्टी में विभिन्न प्रकार के जीवाणु रहते हैं। बिना बीज उपचार किये बोनी करने से बीजों में रोग की संक्रमण या बीज सड़ने का खतरा रहता है। बीज के अंदर भी पहले से रोग का संक्रमण रह सकता है। सही तरह बीज उपचार करने से बीज को रोग संक्रमण एवं सड़ने से बचाया जा सकता है एवं स्वस्थ पौधे से अधिक उपज का लाभ उठाया जा सकता है।

इसके बाद ब्रेडिराईजोबियम 5 ग्राम/किलो बीज व पीएसबी कल्चर 5 ग्रा.किलो दर से बीज उपचारित कर छाया में सुखाकर बोने में उपयोग करें। उपर्युक्त जैविक खादों को विश्वसनीय संस्था से प्राप्त कर सूखी एवं ठंडी जगह पर रखें। यह सुनिश्चित कर लें कि कल्चर के उपयोग करने की तिथि निकल न गयी हो। जैविक खाद का क्रय बीजोपचार के समय ही करें और पहले खरीद कर न रखें। कल्चर एवं कवकनाशकों एवं साथ मिलाकर कभी भी उपयोग में नहीं लाना चाहिए।

कृषकों द्वारा अपनाई जा रही स्थानीय जैविक कीट एवं पौध रोग नियंत्रण की विधियॉ

गौ–मूत्र :–गौमूत्र, कांच की शीशी में भरकर धूप में रख सकते हैं। जितना पुराना गौमूत्र होगा उतना अधिक असरकारी होगा। 12–15 मिली लीटर गौमूत्र प्रति लीटर पानी में मिलाकर फसलों में बुआई के 15 दिन बाद, स्प्रेयर पंप द्वारा प्रत्येक 10 दिवस में छिड़काव करने से फसलों में रोग एवं कीड़ों में प्रतिरोधी क्षमता विकसित होती है, जिससे प्रकोप की संभावना कम रहती है।

नीम के उत्पाद :–नीम भारतीय मूल का पौधा है, जिसे समूल ही वैद्य के रूप में मान्यता प्राप्त है। इससे मनुष्य के लिए उपयोगी औषधियॉ तैयार की जाती है तथा इसके उत्पाद फसल संरक्षण के लिये भी अत्यन्त उपयोगी है।

नीम पत्ती का घोल :–नीम की 10–12 किलो पत्तियॉ, 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगोयें। पानी हरा पीला होने पर इसे छानकर, एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करने से इल्ली की रोकथाम होती है। इस औषधि की तीव्रता को बढ़ाने हेतु बेशरम, धतूरा तम्बाकू आदि के पत्तों को मिलाकर काढ़ा बनाने से औषधि की तीव्रता बढ़ जाती है। यह दवा कई प्रकार के कीड़ों को नष्ट करने में उपयोगी सिद्ध है।

नीम की निबोली :–2 किलो नीम की निबोली लेकर महीन पीस लें। इसमें 2 लीटर ताजा गौ मूत्र मिला लें। इसे 10 किलो छाछ मिलाकर 4 दिन रखें और 200 लीटर पानी मिलाकर खेतों में फसल पर छिड़काव करें।

नीम की खली :–जमीन में दीमक तथा व्हाइट ग्रब एवं अन्य कीटों की इल्लियॉ व प्यूपा को नष्ट करने तथा भूमि जनित रोग विल्ट आदि के रोकथाम के लिये इसका उपयोग किया जाता है। 6–8 क्विंटल प्रति एकड़ की दर से अंतिम बखरनी करते समय कूटकर बारीक चूर्ण खेत में मिलाएं।

बेशरम पत्ती घोल :–बेशरम अथवा आइपोमिया की 10–12 किलो पत्तियॉ, 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगोयें। पत्तियों का अर्क उतरने पर इसे छानकर एक एकड़ फसल पर छिड़काव करें। इससे कई कीटों का प्रभावी नियंत्रण होता है।

मट्ठा :–मट्ठा, छाछ, मही आदि नाम से जाना जाने वाले दुग्ध उत्पाद का उपयोग फसलों में कीट व्याधि के उपचार के लिये लाभप्रद है। मिर्ची, टमाटर आदि जिन फसलों में चुर्रामुर्रा या कुकड़ा रोग आता है, उसके रोकथाम हेतु एक मटके में छाछ डालकर उसका मुॅह पोलीथिन से बांध दें, इस मटके को 30–45 दिन तक मिट्टी में गाड़ दें। इसे छिड़काव करने से कीट एवं रोगों से बचत होती है। 100–150 मि.ली.

छाछ 15 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करने से कीट–व्याधि का नियंत्रण होता है। यह उपचार सस्ता, सुलभ, लाभकारी होने से कृषकों में लोकप्रिय है।

मिच–लहसुन :–आधा किलो हरी मिर्च, आधा किलो लहसुन पीसकर चटनी बनाकर पानी में घोल बनायें। इसे छानकर 100 लीटर पानी में घोलकर, फसल पर छिड़काव करें। 100 ग्राम साबुन पावडर भी मिलायें, जिससे पौधों पर घोल चिपक सके। इसके छिड़काव करने से कीटों का नियंत्रण होता है।

लकड़ी की राख :–1 किलो राख में 10 मि.ली. मिट्टी का तेल डालकर, इस पाउडर का छिड़काव 25 किलो प्रति हैक्टर की दर से करने पर एफिड्स एवं कद्दू के लाल कीड़े (पंपकिन बीटल) का नियंत्रण हो जाता है।

ट्राईकोडर्मा :–ट्राईकोडर्मा एक ऐसा जैविक फॅफूंद नाशक है जो पौधों में मृदा एवं बीज जनित बीमारियों को नियंत्रित करता है। बीजोपचार के लिये ट्राईकोडर्मा का उपयोग 5–6 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपयोग किया जाता है। मृदा उपचार में 1 किलोग्राम ट्राईकोडर्मा को 100 किलोग्राम अच्छी सड़ी हुई खाद में मिलाकर अंतिम बखरनी के समय प्रयोग करें।

कटिंग व जड़ उपचार :–200 ग्राम ट्राईकोडर्मा को 15–20 लीटर पानी में मिलायें और इस घोल में 10 मिनिट तक रोपण करने वाले पौधों की जड़ों एवं कटिंग को उपचारित करें। 3 ग्राम ट्राईकोडर्मा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10–15 दिन के अंतर पर खड़ी फसल पर 3–4 बार छिड़काव करने से वायुजनित रोग का नियंत्रण होता है।

अन्य नुस्खे :–

इल्ली नियंत्रण :–

- 5 लीटर देशी गाय के मट्ठे में 5 किलो नीम के पत्ते डालकर 10 दिन तक सड़ाये। नीम की पत्तियों को सड़े हुए मठे में मसल लें। इस नीमयुक्त मिश्रण को छानकर 150 लीटर पानी में घोल बनाकर, प्रति एकड़ के मान से समान रूप से फसल पर छिड़काव करें। इससे इल्ली व माहू का प्रभावी नियंत्रण होता है।
- 5 लीटर मट्ठे में, 1 किलो नीम के पत्ते व धतूरे के पत्ते डालकर, 10 दिन सड़ने दें। इसके बाद मिश्रण को छानकर इल्लियों का नियंत्रण करें।
- 5 किलो नीम के पत्ते 3 लीटर पानी में डालकर उबाल लें। जब आधा रह जाये तब उसे छानकर 150 लीटर पानी में घोल तैयार करें। इस मिश्रण में 2 लीटर गौ–मूत्र मिलायें। अब यह मिश्रण एक एकड़ के मान से फसल पर छिड़कें।
- आधा किलो हरी मिर्च व लहसुन पीसकर 150 लीटर पानी में डालकर छान ले तथा एक एकड़ में इस घोल का छिड़काव करें।

- मारूदाना, तुलसी (श्यामा) तथा गेंदे के पौधे फसल के बीच में लगाने से इल्ली का नियंत्रण होता है।
- टिन की बनी चकरी खेतों में लगाने से भी इल्लियॉ गिर जाती है।

दीमक नियंत्रण :–

- मक्का के भुट्टे से दाना निकलने के बाद, जो गिण्डीयॉ बचती है, उन्हें एक मिट्टी के घड़े में इक्ट्ठा करके घड़े को खेत में इस प्रकार गाड़ें कि घड़े का मुॅह जमीन से कुछ बाहर निकला हो। घड़ के ऊपर कपड़े बांध दे तथा उसमें पानी भर दें। कुछ दिनों में ही आप देखेंगे कि घड़े में दीमक भर गई है। इसके उपरांत घड़े को बाहर निकालकर गरम कर लें ताकि दीमक समाप्त हो जावे। इस प्रकार के घड़े को खेत में 100–100 मीटर की दूरी पर गड़ाऍ तथा करीब 5 बार गिण्डियॉ बदलकर यह क्रिया दोहराऍ। खेत में दीमक समाप्त हो जावेगी।
- सुपारी के आकार की हींग एक कपड़े में लपेटकर तथा पत्थर में बांधकर खेत की ओर बहने वाली पानी की नाली में रख दें। उसमें दीमक तथा उगरा रोग नष्ट हो जावेगा।
-

उगरा नियंत्रण :–

- 1 लीटर मट्ठे में चने के आकार के 3 हींग के टुकड़े मिलाकर उससे चने का बीजोपचार कर तत्पश्चात् बोनी करें। सोयाबीन, उड़द, मूॅग एवं मसूर के बीजों को अधिक गीला न करें।
- 400 ग्राम नीम के तेल में 100 ग्राम कपड़े धोने वाला पावडर डालकर खूब फेंटे, फिर इस मिश्रण में 150 लीटर पानी डालकर घोल बनाऍ। यह एक एकड़ के लिये पर्याप्त है।

// गौ मूत्र एक फायदे अनेक //

गाय के मूत्र में कार्बोलिक एसिड होता है, जो कीटाणुनाशक है। अतः शुद्धि और स्वच्छता बढ़ाता है। प्राचीन ग्रंथों ने इससे ही गौमूत्र को पवित्र कहा है। आधुनिक दृष्टि से गौमूत्र में नाइट्रोजन, फास्फेट, यूरिया, यूरिक एसिड, पोटेशियम और सोडियम होता है। जिन महिनों में गाय दूध देती है। उस वक्त गौमूत्र में लेक्टोज रहता है जो हृदय और मस्तिष्क के विकारों में बहुत हितकारी है। स्वर्णक्षार भी मौजूद है जो रसायन है।

गौमूत्र सेवन के लिये जो गाय रखी जाती है वह निरोगी और युवा होनी चाहिये। जंगल क्षेत्र और चट्टानें जहॉ गायों का मूत्र अधिक अच्छा होता है। गौमूत्र

को स्वच्छ वस्त्र में छानकर सुबह में खाली पेट पीना चाहिये। स्तनपान करने वाले बच्चों को गौमूत्र देते समय माता को भी गौमूत्र देना चाहिये।

(1) कब्ज के रोगी को उदरशुद्धि के लिये गोमूत्र को अधिक बार कपड़े से छानकर पीना चाहिये।
(2) गौमूत्र में हरड़ चूर्ण भिगोकर धीमी आंच से गरम करना चाहिये। जलीय भाग जल जाने पर इसका चूर्ण उपयोग में लिया जाता है। गौमूत्र का सीधा सेवन जो नहीं कर सकता उसे इस हरड़े का सेवन करने से गौमूत्र का लाभ मिल सकता है।
(3) खांसी, दमा, जुकाम आदि विकारों में गौमूत्र सीधा ही प्रयोग में लाने से तुरंत ही कफ निकलकर विकार शमन होता है।
(4) पाण्डुरोग में हर रोज सुबह खाली पेट ताजा और स्वच्छ गौमूत्र कपड़े से छानकर नियमित पीने से 1 माह में अवश्य लाभ होता है।
(5) बच्चों को खोखली खॉसी होने पर गौमूत्र को छानकर उसमें हल्दी का चूर्ण मिलाकर पिलाना चाहिये।
(6) उदर के किसी भी रोग में गौमूत्र पान से लाभ होता है।
(7) जलोदर में रोगी केवल गौदूध सेवन करे और साथ–साथ गौमूत्र में शहद मिलाकर नियमित पीना चाहिये।
(8) शरीर की सूजन में केवल दूध पीकर साथ में गौमूत्र का सेवन करना चाहिये।
(9) गौमूत्र में सैंधव नमक और राई का चूर्ण मिलाकर पीने से उदररोग मिटता है।
(10) ऑखों की जलन, कब्ज, शरीर में सुस्ती और अरूचि में गौमूत्र में शक्कर मिलाकर लेना चाहिये।
(11) खाज, फुंसियॉ विचर्चिका में गौमूत्र में आबाहल्दी चूर्ण मिलाकर पीना चाहिये।
(12) प्रसूति के बाद सुवा रोग में स्त्री को गौमूत्र पिलाने से अच्छा लाभ होता है। चर्म रोगों में हरताल, बाकुची तथा मालकनी को गौमूत्र में मिलाकर सोगठी बनाकर इसे दूषित त्वचा पर लगाना चाहिये।
(13) इसे सफेद कुष्ठ में बाकुची तथा मालकांगनी को गौमूत्र में मिलाकर सोगठी बनाकर इसे दूषित त्वचा पर लगाना चाहिये।
(14) सफेद कुष्ठ में बावची के बीज को गौमूत्र में अच्छी तरह पीसकर लेप करना चाहिये।
(15) शरीर में खुजली होने पर गौमूत्र से मालिश और स्नान करना चाहिये।
(16) कृष्णजीरक को गौमूत्र में पीसकर इसका शरीर पर मालिश और गौमूत्र स्नान करने से चर्म रोग मिटते हैं।
(18) ईंट को खूब तपाकर गौमूत्र में इसे बुझाकर कपड़े में लपेटकर यकृत और प्लीहा (तिल्ली की सूजन पर सेंक करने से लाभ होता है।
(19) कृमि रोग में डीकामाली का चूर्ण गौमूत्र के साथ देना चाहिये।
(20) सुवर्ण, लोहा, वत्सनाभ, कुचला आदि का शोधन करने के लिए और भस्म बनाने के लिए औषधि निर्माण में गौमूत्र का उपयोग होता है।

(21) चर्मरोग में उपयोगी महामरिच्यादितेल और पंचगव्य घृत बनाने में गौमूत्र उपयोग में लाया जाता है।

(22) हाथी पॉव (फायलेरिया) रोग में गौमूत्र सुबह में खाली पेट लेने से यह रोग मिट जाता है।

(23) गौमूत्र का क्षार उदर वेदना में, मूत्ररोध में तथा वायु व अनुलोमन करने के लिए दिया जाता है।

(24) गौमूत्र सिर में अच्छी तरह मलकर थोड़ी देर तक लगे रखना चाहिये। सूखने के बाद धोने से बाल सुंदर होते हें।

(25) गौमूत्र में पुराना गुड़ और हल्दी चूर्ण मिलाकर पीने से दाद, कुष्ठ रोग और हाथीपॉव में लाभ होता है।

(26) गौमूत्र के साथ एरंड तेल एक मास तक पीने से संधिवात और अन्य वातविकार नष्ट होते हैं।

(27) बच्चों को उदर वेदना तथा पेट फूलने पर एक चम्मच गौमूत्र में थोड़ा नमक मिलाकर पिलाना चाहिये।

(28) बच्चों को सूखा रोग होने पर एक मास तक सुबह और शाम गौमूत्र में केशर मिलाकर पिलाना चाहिये।

(29) शरीर में खाज–खुजली हो तो गौमूत्र में नीम के पत्ते पीसकर लगाना चाहिये।

(30) गौमूत्र के नियमित सेवन से शरीर में स्फूर्ति रहती है, भूख बढ़ती है और रक्त का दबाव स्वाभाविक होने लगता है।

(31) क्षय रोग में गोबर और गौमूत्र की गंध से क्षय के जंतु का नाश होने से अच्छा लाभ होता है।

(32) टायफाइड की दवाएँ खाने से अक्सर सिर या किसी स्थान के बाल उड़ जाते हैं तो इसके इलाज हेतु गौमूत्र में तंबाकू को खूब पीसकर डाल देवें, 10 दिन बाद पेस्ट टाइप बन जाने पर अच्छा रगड़ कर बाल झड़े स्थान पर बाल फिर आ जाते हैं। सिर में भी लगा सकते हैं।

***